निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली

(Loadless Currency Operating System)

(समस्त मौद्रिक समस्याओं का सरल, सुनिश्चित एवं त्वरित समाधान)

मौद्रिक समस्याओं के समाधान हेतु जादू की छड़ी

(A Magic Stick For Solution of Monetary Problems)

निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अपनाओ!
मौद्रिक समस्याओं से छुटकारा पाओ!!

लेखक

श्री अरविन्द 'अंकुर'

न्यायधर्मसभा

जगजीतपुर, कनखल, हरिद्वार (उत्तरांचल)

फोन : 01334 – 244760, मोबाइल : 09319360554

वेबसाइट : www.nyayadharmsabha.org

ईमेल : info@nyayadharmsabha.org

निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली

(Loadless Currency Operating System)

वर्तमान राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के लिए वरदान

(A Boon to Present National Economies of the World)

मौद्रिक समस्याओं के समाधान हेतु जादू की छड़ी

(A Magic Stick For Solution of Monetary Problems)

निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली द्वारा निम्न समस्याओं का सुनिश्चित समाधान

१. मौद्रिक शोषण की समस्या

(Monetary Exploitation Problem)

२. अनुद्यमिता की समस्या

(Idleness Problem)

३. धनध्रुवीकरण की समस्या

(Wealth Polarization Problem)

४. मौद्रिक चलनगति की समस्या

(Currency Velocity Problem)

५. अन्य मौद्रिक समस्याएँ

(Other Monetary Problems)

भूमिका

यह पुस्तिका हमारे द्वारा लिखित 'न्यायशील अर्थशास्त्र' नामक ग्रन्थ में वर्णित ***'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली'*** *को राष्ट्रीय व्यवस्था में प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से लिखी गयी है। इस पुस्तिका में वर्णित 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' अन्य किसी भी वित्तीय प्रणाली* ***(Financial System)*** *से श्रेष्ठ है। एक सुशिक्षित एवं सभ्य समाज या राष्ट्र में निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली सहज ही अपनायी जा सकती है। 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' बिलकुल सरल, सहज, सुगम एवं सस्ता है। यह प्रणाली राष्ट्र में मौद्रिक शोषण को समाप्त करने एवं मुद्रा की चलनगति को बढ़ाने में में सक्षम है।*

कोई भी संप्रभु राष्ट्र ***(Sovereign Nation)*** *जिसे अपनी मुद्रा जारी करने का अधिकार है, वह पर्याप्त मात्रा में अपने नागरिकों, संस्थाओं, कम्पनियों, उद्यमों, सरकारी सत्ताओं आदि को उधार या ऋण के रूप में निर्भार मुद्रा* ***(Loadless Currency)*** *सुलभ करा सकता है। निर्भार मुद्रा का अभिप्राय उस मुद्रा से है, जिस पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स एवं शुल्क आदि का भार आरोपित न किया गया हो, और वह निष्पक्ष रूप से सर्वसुलभ हो। भारहीन मुद्रा की चलनगति तीव्र होती है। मुद्रा पर भार आरोपित करने की नीति वास्तव में न्यायसंगत नहीं हो सकती, क्योंकि मुद्रा कोई वास्तविक धन या सम्पत्ति नहीं है, बल्कि यह किसी सम्पत्ति, सामग्री, वस्तु अथवा सेवा का वैकल्पिक रूप है। अतः मुद्रा को वैकल्पिक साधन ही कहा जा सकता है। यह किन्हीं वस्तुओं अथवा सेवाओं का मूल्यांकन, प्रतिस्थापन एवं विनिमयन करती है। राज्य की ख्याति के कारण यह स्वयं मूल्यहीन होते हुए भी अपने घोषित मूल्य के समकक्ष वस्तुओं एवं सेवाओं का प्रतिस्थापन करने में समर्थ होती है। इसे राजकीय वचन* ***(Guarantee)****, आदेश, ख्याति आदि के माध्यम से भी निगमित एवं प्रचालित किया जाता है। यदि यह मुद्रा वास्तविक धन न होकर केवल वैकल्पिक साधनमात्र है, तो इसका प्रचालन निर्भार होना चाहिए। इस पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स, शुल्क अथवा नियमों, नीतियों, निर्णयों द्वारा पक्षपात करके दुर्लभ नहीं बनाया जाना चाहिए, क्योंकि इससे मुद्राप्रचालन का उद्देश्य कभी पूर्ण नहीं हो सकता। समाज या राष्ट्र में आर्थिक व्यवहारों को सरल, सद्गतिवान एवं विकासोन्मुख बनाना ही मुद्राप्रचालन का उद्देश्य है। कठिन एवं गतिहीन मुद्राप्रचालन किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास को कुंठित कर डालता है। मुद्राप्रचालन जितना सरल एवं गतिवान होगा, आर्थिक विकास, प्रगति एवं समृद्धि की संभावना उतनी प्रबल होगी। जो राष्ट्र सम्पूर्ण लोकजीवन का आर्थिक विकास, प्रगति एवं समृद्धि चाहता है, उसे मुद्राप्रचालन को सदैव निर्भार बनाए रखना चाहिए।*

मुद्रा समस्त स्थूल संसाधनों का विकल्प है। यह विकल्प समस्त प्रकार के

आर्थिक व्यवहारों को सरल बनाता है। मौद्रिक विकल्प के विना आर्थिक व्यवहार कठिन होने के साथ-साथ गतिहीन भी बना रहता है। प्रबुद्ध सभ्यता में इस मुद्रारूपी विकल्प के अत्यन्तिम सूक्ष्म स्वरूप का आविष्कार स्वतः हो जाता है, जिसे 'आंकिक मुद्रा' कहते हैं। मुद्रा मनुष्यों की एक अनिवार्य आवश्यकता है। मुद्रा की सुलभता को बनाए रखने के लिए उस पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का बोझ नहीं लादना चाहिए, अन्यथा दुर्लभ हुई मुद्रा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ नहीं हो सकती। मुद्रा पर भार श्रमिकों का प्रत्यक्ष शोषण है, क्योंकि यह किसी श्रम के द्वारा ही प्रतिफलित होती है। अतः किसी को रु.100/- ऋण देकर उससे रु.200/- या रु.300/- वापस माँगना न्यायसंगत नहीं है। सरकार द्वारा मुद्राप्रचालन को जनसेवा के रूप में संचालित किया जाना चाहिए। मुद्राप्रचालन सम्बन्धी व्ययों को राजकोष द्वारा वहन किया जाना उचित है, क्योंकि यह एक प्रकार की अनिवार्य जनसेवा है। जनसेवा ही राज्य का उत्तरदायित्व है। अतः मुद्राप्रचालन सम्बन्धी जनसेवा के लिए सरकार द्वारा कोई व्याज, टैक्स या शुल्क नहीं माँगा जा सकता। राज्य की ओर से उधार या ऋण के रूप में किसी निश्चित समयावधि के लिए प्रदान करी जानेवाली मौद्रिक धनराशि निर्धारित किश्तों में वापस प्राप्त करी जा सकती है। मुद्रा को प्रारंभिक रूप से निर्भार बनाए रखना राज्य का कर्तव्य है। किन्तु यदि मुद्रा उधार या ऋण के रूप में प्रदान करते समय कोई प्रतिभूति न प्राप्त करी जाए, तो उसे पूँजीविनियोग तो नहीं, किन्तु पूँजीविनियोग की भाँति माना जा सकता है, क्योंकि ऋणदाता को पूँजीविनियोजक जैसा उद्यम पर स्वामित्व का अधिकार प्राप्त नहीं होता। जिस किसी उद्यम के लिए यह उधार या ऋण की राशि प्रदान की गई हो, उससे होनेवाले लाभ पर इस ऋणदाता का आनुपातिक अधिकार सिद्ध होता है। अतः उद्यम से प्राप्त होनेवाले लाभ को ऋण के प्रतिफल के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। किन्तु किसी उधार या ऋण पर व्याज, टैक्स या शुल्क प्राप्ति का अधिकार न्यायसंगत नहीं हो सकता। लाभ की न्यायसंगतता का कारण यह है कि ऋण के रूप में धन देते समय व्यक्ति अपने द्वारा उपार्जित धन का किसी कालविशेष के लिए त्याग करता है, और उसके उपभोग द्वारा प्राप्त होनेवाली संतुष्टि से उस कालविशेष में वंचित रहता है। वह उपभोग उसके लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता था, किन्तु उस लाभ से वंचित होने के कारण उसने अपने विकास, प्रगति एवं समृद्धि के अवसर को खो दिया है, अतः यदि उस ऋणराशि के विनियोग से कोई लाभोत्पादन हुआ हो, तो उसे समानुपातिक लाभ की प्राप्ति का न्यायोचित अधिकार सिद्ध हो सकता है। किन्तु उस ऋणराशि के विनियोग द्वारा यदि उद्यम में लाभोत्पादन न हुआ हो, तो ऋणदाता को कुछ भी लाभ पाने का अधिकार नहीं होगा। किन्तु उद्यम को होनेवाली किसी हानि के लिए भी वह उत्तरदायी नहीं होगा। इसीलिए ऋण पर लाभ की नीति को न्यायसंगत माना जा सकता है। किन्तु व्याज, टैक्स या शुल्क को न्यायसंगत इसलिए नहीं माना जा सकता कि वह उधार या ऋण के रूप में प्रदान की

गई राशि के द्वारा कोई लाभ न उत्पन्न होने पर भी ऋणग्राही को एक विशेष धनराशि व्याजादि के रूप में चुकानी पड़ती है।

उधार अथवा ऋण को निवेश अथवा विनियोग से भिन्न माना जा सकता है। ऋण केवल उद्यम के लाभ पर समानुपातिक प्रतिफल की प्राप्ति के उद्देश्य से दिया जाना चाहिए। जबकि उधार केवल सौहार्दपूर्ण व्यवहार है, वह लाभ और हानि दोनों प्रकार की हिस्सेदारी से मुक्त रहता है। निवेश या विनियोग किसी उद्यम में संभावित लाभ और हानि दोनों को स्वीकार करता है।

'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' के प्रतिपादन हेतु लिखित यह पुस्तिका संक्षिप्त होते हुए भी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को अनेक प्रकार की मौद्रिक समस्याओं से मुक्ति प्रदान करने में सक्षम है। इसे पढ़कर कोई भी प्रबुद्ध व्यक्ति यह समझ सकता है कि यह 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' अद्वितीय एवं अद्भुत है, जो किसी भी राष्ट्र के समस्त नागरिकों को मौद्रिक शोषण आदि अनेक प्रकार की समस्याओं से बचाने में समर्थ है। यह न्यायशील निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अपनानेवाला राष्ट्र समस्त प्रकार के मौद्रिक शोषणों से मुक्त हो सकता है, जिससे सरकारी अथवा साहूकारी दोनों प्रकार के शोषण से मुक्त होकर प्रजा अपने परिश्रम के समुचित प्रतिफल का उपभोग करने के योग्य हो जाती है। अन्यायपूर्वक करी जानेवाली अनुचित वसूली ही मौद्रिक शोषण है। शोषण चाहे सरकार द्वारा किया जाए अथवा साहूकार द्वारा किया जाए, दोनों प्रकार का शोषण जनता के लिए भयंकर समस्या के रूप में प्रकट होता है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स या शुल्क को श्रम का शोषण ही कहा जा सकता है। श्रम द्वारा उपार्जित धन को अनावश्यक रूप से व्याज, टैक्स या शुल्क के रूप में खींचकर जनसामान्य को दरिद्र बनाने की चेष्टा कभी प्रशंसनीय नहीं हो सकती। मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क की प्रथा अमानवीय है, असभ्य है, अवैज्ञानिक है, अनैतिक है, अतार्किक है, अन्यायकारी है। इसकी जितनी भी भर्त्सना की जाए, कम है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का भार वह भयंकर पाप है, जो इसके हाथों में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी की भाँति लग जाता है। तब न मुद्रा कुछ कर पाती है, और न चल पाती है। निष्क्रिय और गतिहीन मुद्रा समाज के आर्थिक विकास को निगल जाती है।

इस पुस्तिका में निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली के सभी पहलुओं पर दृष्टिपात किया गया है। इस 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' के सभी पक्ष सकारात्मक हैं। इसमें गुणों और लाभों का भण्डार छिपा हुआ है, किन्तु इसमें दोषों और हानियों का कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। यद्यपि कुछ मूर्ख और मौद्रिक अपराध में लिप्त कुछ धूर्त प्रवृत्ति के लोग इस निर्दोष प्रणाली के विरुद्ध निरर्थक तर्क देने की कुचेष्टा करेंगे। उस पर प्रबुद्धजनों को चिन्तित नहीं होना चाहिए, तथा प्रत्येक राष्ट्र के प्रबुद्धवर्ग को शीघ्रातिशीघ्र इस निर्दोष एवं न्यायशील 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' को अपने राष्ट्र में अविलम्ब लागू करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि राष्ट्र में आर्थिक विकास की

धीमी गति को तीव्रता एवं सुगत्यात्मकता प्रदान करके राष्ट्र में व्याप्त भयंकर दरिद्रता, गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, ऋणग्रस्तता, आर्थिक या मौद्रिक शोषण आदि के रूप में उपस्थित राष्ट्रीय दुर्दशा को जन्म देनेवाली मौद्रिक समस्याओं का अन्त हो सके।

सार्वजनिक एवं राष्ट्रीय हितों को देखते हुए यह प्रणाली शीघ्रातिशीघ्र लागू करने की अनुशंसा 'लेखक' द्वारा करी जा रही है। लेखक स्वतः सुशिक्षित, अर्थशास्त्रवेत्ता, सार्वजनिक, सामाजिक एवं सार्वभौमिक हितों में विगत 2 दशकों से कार्यरत, 100 से भी अधिक एवं महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के लेखक तथा कई सामाजिक संस्थाओं एवं संगठनों के संस्थापक एवं मार्गदर्शक हैं। अतः भारतराष्ट्र एवं विश्व के अन्य राष्ट्रों और उनकी सरकारों से लेखक की अपील है कि वे शीघ्रातिशीघ्र इस 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' को लागू करके अपने राष्ट्र एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाएँ। अतः भारतसहित सम्पूर्ण विश्व के समस्त राष्ट्रों को अपनी मौद्रिकनीति पर पुनर्विचार करते हुए, इस 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' को स्वीकार करके अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुसभ्यता, समृद्धि और विकास के मार्ग पर ले जाना चाहिए। यह प्रणाली किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास को सरल, सहज एवं तीव्र बनाकर सम्पूर्ण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव डालती है, तथा उसके आर्थिक विकास की समस्त संभावनाओं को साकार करके आर्थिक समृद्धि की ओर ले जाती है। मौद्रिक नीति में यह साधारण संशोधन सम्पूर्ण राष्ट्र को समृद्ध, सुसभ्य, सुखी एवं धन्य बना सकता है, तथा दरिद्रता, अनुद्यमिता, धनध्रुवीकरण, मौद्रिक गतिरोध एवं अन्य मौद्रिक समस्याओं को पूर्णतः समाप्त करके यह 'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' अपनी महत्ता को सिद्ध कर सकती है। यह प्रणाली सुनिश्चित रूप से शुभ परिणाम प्रस्तुत करके अपने महत्त्व को स्वयं प्रमाणित कर देगी। राष्ट्रीय सरकार इसे लागू करके देखे, यह मौद्रिक नीति चमत्कारिक परिणाम प्रस्तुत करनेवाली है।

दिनांक : 15 फरवरी, 2010

– लेखक

अरविन्द 'अंकुर'

न्यायधर्मसभा

जगजीतपुर, कनखल, हरिद्वार

❀❀❀

निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली
(Loadless Currency Operating System)

***'मुद्रा' का परिचय* (Introduction of Currency)** :– *यथार्थतः मुद्रा को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए :–*

1) *''राज्य की ओर से निगमित करी जानेवाली धन की प्रतीकात्मक इकाई को 'मुद्रा' कहते हैं।''*

2) *''शासन की ओर से निर्धारित राज्याधिकारी द्वारा जनता के बीच समस्त आर्थिक व्यवहारों को सरल बनाने के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यांकन एवं प्रतिस्थापन हेतु प्रचालित की जानेवाली धन की वैकल्पिक व्यवस्था ही 'मुद्रा' के नाम से जानी जाती है।''*

3) *''वास्तव में ऐसी कोई भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष धन की इकाई को 'मुद्रा' कहा जा सकता है, जो मुद्रा के कार्य कर सकती है।''*

4) *''किन्हीं वस्तुओं एवं सेवाओं का वह विकल्प जो उनके मूल्यांकन, प्रतिस्थापन एवं विनिमयन का कार्य कर सके, तथा सभी प्रकार के आर्थिक व्यवहारों को संभव बना सके, वही मुद्रा है।''*

***'मौद्रिक नीति' का परिचय* (Introduction of Monetary Policy)** :– *मुद्रा के तीन कार्य हैं– मूल्यांकन, प्रतिस्थापन, विनिमयन। इन तीनों कार्यों का सफलतापूर्वक संपादन करने के लिए निम्नलिखित तीन प्रकार की मौद्रिक नीतियों की आवश्यकता होती है :–*

1) ***मुद्रानिर्धारण नीति* (Currency Determination Policy) :** *मुद्रा के स्वरूप एवं अस्तित्व के निर्धारण सम्बन्धी नीतियों को ही मुद्रानिर्धारण नीति कहते हैं। मुद्रा की स्वयं की मूल्यवत्ता का निर्धारण ही इसके मौलिक अस्तित्व का निर्धारण है। स्वयं का कोई मूल्यांकन सिद्ध हुए विना मुद्रा किसी भी वस्तु अथवा सेवा के मूल्यांकन का कार्य नहीं कर सकती। मुद्रा के रूप में वस्तु, धातु, कागज आदि के अनेक प्रयोग हो चुके हैं, अब समाज की बौद्धिक प्रगति के कारण मुद्रा का स्वरूप निरन्तर सूक्ष्म होते हुए आंकिक मुद्रा के रूप में प्रकट हो रहा है। मुद्रा के आंकिक स्वरूप और मुद्रा की मूल्यवत्ता का निर्धारण ही मुद्रानिर्धारण नीति का मुख्य विषय है। मुद्रा का मूल्यनिर्धारण करने के लिए किसी भी मूल्यवान सर्वस्वीकार्य धातु जैसे– स्वर्ण या रजत, को आधार माना जा सकता है। एक ग्राम स्वर्ण या एक ग्राम रजत को मुद्रा की एक इकाई के रूप में माना या स्वीकार किया जा सकता है। इसी शुद्ध मान्यता के आधार पर मुद्रानिगमन एवं प्रचालन आंकिक रूप में किया जाता रहा जा सकता है।*

2) ***मुद्रानिगमन नीति* (Currency Issue Policy) :** *सरकार के मौद्रिक संस्थान द्वारा मुद्रानिगमन करनेसम्बन्धी नीतियों को ही मुद्रानिगमन नीति कहते हैं। मुद्रानिगमन को मौद्रिक तरलीकरण* (Monetary Liquidization) *के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए। मौद्रिक तरलीकरण को मौद्रिक द्रवीकरण भी कहते हैं। राजकीय मौद्रिक संस्थान द्वारा जनता को मौद्रिक धन सुलभ कराने सम्बन्धी नीतियों को ही मुद्रानिगमन नीति के रूप में परिभाषित करना चाहिए। इस मौद्रिक नीति का मूल विषय 'संतुलित मौद्रिक*

तरलीकरण' (Balanced Monetary Liquidization) है। किसी भी स्थूल या ठोस सम्पदा को मौद्रिक धन के द्वारा प्रतिस्थापित करने की प्रक्रिया को ही मौद्रिक तरलीकरण कहते हैं। इस मौद्रिक तरलीकरण के रूप में ही मुद्रा का निगमन किया जाता है। इस मौद्रिक तरलीकरण की प्रक्रिया को संतुलित बनाए रखना ही मुद्रानिगमन नीति की शुद्धता अथवा न्यायशीलता का प्रमाण है। किसी स्थूल या ठोस सम्पत्ति का जो कुछ भी बाजारमूल्य सिद्ध हो, उसी के समतुल्य तरलीकृत धनराशि सुलभ कराना ही संतुलित मौद्रिक तरलीकरण कहलाता है।

3) ***मुद्राप्रचालन नीति (Currency Run Policy) :*** *मुद्राविनिमय के कार्य को संतुलित बनाए रखने के लिए मुद्राप्रचालन नीति की आवश्यकता होती है। बाजार में मुद्रा के समस्त लेन-देन मुद्राप्रचालन नीति द्वारा नियन्त्रित होते हैं। मौद्रिक व्यवहार को शुद्ध एवं संतुलित बनाए रखने के लिए 'निर्भार मुद्राप्रचालन' (Loadless Currency Operation) की आवश्यकता होती है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का आरोपण ही मुद्रा को बोझिल बनाते हैं। यह बोझ ही मुद्रा पर भार कहलाता है। भारयुक्त मुद्रा की चलनगति धीमी पड़ जाती है, अथवा अवरुद्ध भी हो सकती है, जिससे आर्थिक गतिविधियाँ एवं आर्थिक विकास अवरुद्ध होने लगता है। मुद्रा की चलनगति को संतुलित बनाए रखने के लिए 'निर्भार मुद्राप्रचालन नीति' की आवश्यकता होती है। मुद्रा पर किसी भी प्रकार का भार थोपना कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता। मुद्रा पर व्याज तो वह भयंकर महापाप है, जो सम्पूर्ण मानवजाति को दरिद्रता के गर्त में धकेल सकता है। व्याजभक्षण प्रथा केवल चारित्रिक पाप ही नहीं, वरन् व्यावहारिक दोष एवं अपराध भी है। मुद्रा पर व्याज की बेड़ी, टैक्स की हथकड़ी एवं शुल्क के हंटर का कोई औचित्य प्रमाणित नहीं हो सकता। मुद्रा की स्वतन्त्रता की तीनों मुख्य बाधाओं को समाप्त करने के लिए एक न्यायशील मुद्राप्रचालन नीति की आवश्यकता होती है।*

'मुद्राप्रचालन' का परिचय (Introduction of Currency Operation) *:- मुद्रा के तीन कार्य हैं- मूल्यांकन, प्रतिस्थापन, विनिमयन। इन तीनों कार्यों का सम्पादन करने के लिए ही मुद्रा का निगमन किया जाता है। मुद्रा एक वैकल्पिक साधन है, जो किन्हीं भी सम्पदाओं, सामग्रियों, वस्तुओं एवं सेवाओं के विकल्प के रूप में प्रयुक्त होती है। मुद्रा के विना कोई भी आर्थिक व्यवहार कठिन हो जाता है। किसी भी क्रय-बिक्रय, लेन-देन, आदान-प्रदान के लिए माध्यम के रूप में मुद्रा प्रयुक्त होने से समस्त आर्थिक व्यवहार सरलतापूर्वक सम्पन्न होने लगते हैं। बाजार में मुद्रा की उपस्थिति के विना आर्थिक व्यवहार में अनेक संकटों एवं समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः बाजार में मुद्रा की पर्याप्त सुलभता ही आर्थिक व्यवहार को सरल बनाए रख सकती है। मुद्रा का अभाव आर्थिक विकास में बाधक है। मुद्रा की दुर्लभता का मूल कारण है- मुद्रा पर अनावश्यक भार का आरोपण। मुद्रा पर किसी भी प्रकार का बोझ लादकर उसे तीव्र गति से नहीं चलाया जा सकता। मुद्रा की चलनगति धीमी पड़ने से सभी आर्थिक क्रियाएँ धीमी पड़ जाती हैं, जिससे आर्थिक विकास का रथचक्र धीमा पड़ने लगता है। अतः किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए मुद्रा को गतिशील बनानेवाली मुद्रा प्रचालन प्रणाली की आवश्यकता होती है।*

'मुद्राप्रचालन' की परिभाषा *(Definition of Currency Operation) :– मुद्राप्रचालन की संक्षिप्त परिभाषाएँ इसप्रकार से दी जा सकती हैं :–*

एक सामान्य परिभाषा – ***'एक हाथ से दूसरे हाथ में मुद्रा के आवागमन को ही मुद्रा का चलन कहते हैं, तथा इस हस्तांतरण की प्रक्रिया को विविध नियमों, नीतियों एवं निर्णयों द्वारा व्यवस्थित करना ही मुद्राप्रचालन कहलाता है।'***

अन्य सरल शब्दों में – ***'मुद्रा के सार्वजनिक प्रयोग की सरकार द्वारा करी जानेवाली समुचित व्यवस्था को ही मुद्राप्रचालन कहते है।'***

न्यायशीलता ही मुद्राप्रचालन का आधार है। न्यायशील नियमों, नीतियों, निर्णयों द्वारा किया जानेवाला मुद्राप्रचालन ही लोकहितकारी होता है। न्यायशील मुद्राप्रचालन की प्रणाली सदैव निर्भार होती है, जिससे मुद्राप्रचालन सहजतापूर्वक सम्पन्न होता है, तथा मुद्रा अबाधगति से निरन्तर प्रवाहमान बनी रहती है।

'निर्भार मुद्राप्रचालन' का अभिप्राय *(Meaning of Loadless Currency Operation) :– मुद्राप्रचालन हेतु ऐसे नियमों, नीतियों, निर्णयों का प्रयोग, जो मुद्रा पर किसी भी प्रकार का भार आरोपित करते हों, उनसे मुक्त मौद्रिक व्यवहार की व्यवस्था को ही निर्भार मुद्राप्रचालन कहते हैं। ऐसे कोई भी मौद्रिक नियम, नीति, निर्णय जो मुद्रा पर किसी भी प्रकार का भार आरोपित करते हों, वे न्यायशील नहीं हो सकते। मुद्रा पर आरोपित होनेवाले भार वर्तमान में* ***'ब्याज, टैक्स एवं शुल्क'*** *के रूप में देखे जा सकते हैं। ये तीनों ही मुद्रा के शिर पर लदे हुए ऐसे भयंकर भार हैं, जो मुद्रा को ठीक से चलने नहीं देते। ये 'भार' मुद्रा की चलनगति को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों प्रकार से प्रभावित करते हैं। मुद्रा पर लदे हुए ये भार मुद्रा के पैरों में व्याजरूपी बेड़ी एवं टैक्सरूपी हथकड़ी लगाते हैं, तथा सरकारी शुल्क रूपी हंटर उसे प्रताड़ित करते हैं। इन तीनों संकटों से घिरी हुई मुद्रा बोझिल होकर मंदगति से चलती है, अथवा गतिहीन हो जाती है, जिससे समाज या राष्ट्र का आर्थिक विकास प्रभावित होता है, नागरिकों की आर्थिक समृद्धि में विषमता बढ़ती है, लोगों के बीच आर्थिक दशा में पर्वत और घाटी जैसे विशाल अन्तर दिखाई पड़ते हैं। कर्मठ की दरिद्रता एवं अकर्मण्य धूर्तों की धनाढ्यता के रूप में यह दूषित मौद्रिक नीति प्रतिफलित होती है, परिणति के इस लक्षणविशेष से ही इसे समझा जा सकता है।*

मुद्राप्रचालन की नीति का मुद्रा की चलनगति से सम्बन्ध *(Relation of Currency Operation Policy with Velocity of Currency) :– सरकार द्वारा मुद्राप्रचालन की नीति का सीधा सम्बन्ध बाजार में मुद्रा की चलनगति से है। मुद्राप्रचालन सम्बन्धी नियमों, नीतियों, निर्णयों का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से मुद्रा की चलनगति पर पड़ता है। अतः मुद्राप्रचालन की नीति को न्यायशील बनाए विना मुद्रा की चलनगति को साम्यावस्था में प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता। मुद्रा की चलनगति अपनी साम्यावस्था में सदा बनी रहने पर ही राष्ट्रीय आर्थिक विकास अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचकर साम्यावस्था को प्राप्त कर सकता है। साम्यावस्था किसी भी व्यवहार की उस दशा में प्रकट होती है, जहाँ पर उस*

व्यवहार से प्राप्त होनेवाली संतुष्टि अपने चरमोत्कर्ष पर होती है। इस साम्यावस्था को ही परम संतुष्टि, परम सुख, परम समृद्धि एवं परम स्वस्ति की दशा कहते हैं, जिसे प्राचीन भारतीय समय में 'सत्युग की अवस्था' कहते हैं।

मुद्रा की चलनगति *(Velocity of Currency) :– मौद्रिक हस्तांतरण की गति को ही मुद्रा की चलनगति कहते हैं। मुद्रा वस्तुओं एवं सेवाओं के विनिमय का कार्य करती है। मुद्रा की प्रत्येक इकाई अनेक प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं के क्रय–बिक्रय में अपनी भूमिका निभाती है। वह वार–वार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित होती रहती है, जिससे विनिमय कार्य चलता रहता है। किसी निश्चित समय में मुद्रा की कोई इकाई वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय–बिक्रय करने के लिए जितनी वार एक हाथ से दूसरे हाथ में आती और जाती है, उस हस्तांतरण की वारम्वारता की औसत गति को ही मुद्रा की 'चलनगति' कहते हैं। मुद्रा की चलनगति को चलनवेग भी कहा जाता है।*

मुद्रा की चलनगति की परिभाषा *(Definition of Velocity of Currency) :– एक हाथ से दूसरे हाथ में मुद्रा के आवागमन को ही मुद्रा का चलन कहते हैं, तथा इस हस्तांतरण की गति को ही मुद्रा की चलनगति के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसकी कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं :–*

एक सामान्य परिभाषा के अनुसार – ***'किसी समयविशेष में किसी मौद्रिक इकाई को किन्हीं भुगतानों के लिए औसतन जितनी वार प्रयुक्त किया जाता है, उसे ही मुद्रा की चलनगति कहते हैं।'***

अर्थशास्त्री बी.के.गुप्ता के अनुसार – ***'मुद्रा की कोई एक इकाई जितनी वार विनिमय के माध्यन का कार्य करती है, उसे मुद्रा की चलनगति कहते हैं।'***

'मुद्राप्रचालन' के क्षेत्र *(Fields of Currency Operation) :– मुद्राप्रचालन प्रायः निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रयुक्त होता है :–*

1) ***तरलीकरण*** *(Liquidization) : मुद्रा का प्रयोग सर्वप्रथम तरलीकरण के क्षेत्र में होता है। किसी भी स्थूल या ठोस सम्पदा को तरलीकृत करने के लिए मुद्रा प्रयुक्त होती है। अतः तरलीकरण को मुद्राप्रचालन का प्रथम क्षेत्र कहा जा सकता है।*

2) ***विनिमयन*** *(Exchange) : क्रय–बिक्रय की प्रक्रिया ही विनिमयन कहलाती है। वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय–बिक्रय मुद्रा के माध्यम से सरल होने के कारण मुद्राप्रचालन की महत्त्वपूर्ण भूमिका विनिमयन के क्षेत्र में होती है।*

3) ***उपहार*** *(Gift) : मुद्रा का प्रयोग लोगों के स्वागत सत्कार हेतु उपहार के रूप में भी किया जाता है। भेंट या उपहार के लेन–देन में भी मुद्रा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।*

4) ***दान*** *(Donation) : एक व्यक्ति द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति को पुण्यभाव से किया जानेवाला धन का हस्तांतरण 'दान' कहलाता है। दान के क्षेत्र में भी मुद्रा की महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रतिष्ठित है।*

5) निवेश (Investment) : *विनियोग को ही 'निवेश' कहते हैं। उत्पादनशील उद्यमों में पूँजी की आवश्यकता होती है। पूँजी के रूप में मुद्रा प्रयुक्त होती है। अतः निवेश के क्षेत्र में भी मुद्रा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।*

6) ऋण (Loan) : *किसी प्रतिफल की आशा से दिया जानेवाला उधार ही 'ऋण' है। ऋण पर ब्याज निषिद्ध है, किन्तु दिए गए ऋण का प्रयोग यदि किसी लाभकारी उद्देश्य से किया जाए, तो उस लाभ में समानुपातिक अंश प्राप्ति का अधिकार ऋणदाता को न्यायतः प्रशस्त है। ऋण के रूप में दिए जानेवाला धन मौद्रिक हो सकता है। अतः मौद्रिक ऋण के क्षेत्र में मुद्रा की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।*

7) उधार (Borrowing) : *ज्यों का त्यों वापस लौटाने की शर्त पर, किसी प्रतिफल की आशा के विना दिया जानेवाला धन या सम्पदा ही 'उधार' कहलाती है। उधार की प्रक्रिया में भी मुद्रा का प्रयोग हो सकता है। अतः उधार के क्षेत्र में भी मुद्रा की महत्त्वपूर्ण भूमिका सिद्ध होती है।*

8) अन्य लेन-देन (Other Transactions) : *उपरोक्त के अतिरिक्त भी अनेक प्रकार के मौद्रिक लेन–देन होते हैं, जिनमें मुद्रा का प्रयोग होता है, जैसे– ख्याति, प्रतिभूति, वचन, जमानत आदि के रूप में भी मुद्रा का प्रयोग होता है। अतः इन मौद्रिक व्यवहारों में भी मुद्रा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।*

मुद्राप्रचालन के उद्देश्य (Objectives of Currency Operation) *:– सरकार द्वारा राष्ट्र में मुद्राप्रचालन के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं :–*

1) आर्थिक व्यवहार को सरल बनाना (Making Economic Transactions Simple) : *समाज या राष्ट्र में वस्तुओं अथवा सेवाओं का मूल्यांकन एवं विनिमयन एक अनिवार्य आवश्यकता है। सभी आर्थिक लेन–देन मुद्रा के माध्यम से ही सरल बनाए जा सकते हैं। वस्तुविनिमय प्रणाली की कठिनाइयाँ सर्वविदित हैं। अतः उन वस्तुओं का मूल्यांकन करके मौद्रिक इकाइयों द्वारा उनका प्रतिस्थापन करने से आर्थिक व्यवहार सरल हो जाता है। वस्तुओं का मौद्रिक मूल्य चुकाओ और सरलतापूर्वक वस्तुओं को प्राप्त करो। क्रय–विक्रय की सरलता इस मुद्रा के द्वारा ही संभव होती है। समस्त वाणिज्यिक गतिविधियाँ इस मुद्रा के द्वारा ही सरलतापूर्वक सम्पन्न होती हैं। मुद्रा समस्त आर्थिक व्यवहारों की एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में प्रतिष्ठित होती है। अतः मुद्राप्रचालन के पीछे सबसे बड़ा उद्देश्य आर्थिक व्यवहार को सरल बनाना है।*

2) आर्थिक क्रियाओं को गतिमान बनाना (Making Economic Activities Dynamic) : *मुद्रा ही आर्थिक क्रियाओं को गतिशीलता प्रदान करती है। मुद्रा के विना आर्थिक क्रियाएँ बहुत धीमी गति से सम्पन्न होती हैं। आर्थिक क्रियाएँ पाँच प्रकार की होती हैं– विनियोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण, उपभोग। ये पाँचों आर्थिक क्रियाएँ मुद्राप्रचालन की दशा पर निर्भर करती हैं। न्यायशील मुद्राप्रचालन होने पर ये पाँचों आर्थिक क्रियाएँ सरलतापूर्वक चलती हैं। मुद्राप्रचालन जटिल अथवा भारयुक्त होने पर आर्थिक क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।*

3) **आर्थिक विकास को तीव्र बनाना (Making Economic Development Accelerated) :** मुद्राप्रचालन का तीसरा उद्देश्य है– आर्थिक विकास को तीव्रता प्रदान करना, तथा उसे साम्यावस्था तक पहुँचाना। किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास उसकी मुद्राप्रचालन सम्बन्धी नीतियों पर निर्भर करता है। स्वस्थ, स्वच्छ, सम्यक्, संतुलित मुद्राप्रचालन किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास की समस्त संभावनाओं को चरितार्थ कर सकता है। न्यायशील मुद्राप्रचालन की नीति अपनाकर सरकार राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है। जो सरकार अपनी राष्ट्रीय मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का भार लादती है, तथा अनैतिक पक्षपात आदि के अवरोधों द्वारा मुद्रा की चलनगति को बाधित करती है, वह सरकार राष्ट्रीय आर्थिक विकास को कुंठित कर डालती है।

4) **अन्य उद्देश्य (Other Objectives) :** सरकार द्वारा न्यायशील मुद्राप्रचालन के अन्य भी उद्देश्य हो सकते हैं, जैसे– समाज में मुद्रा पर व्याज की प्रथा को समाप्त करना, गरीबों का आर्थिक संरक्षण करना, आर्थिक शोषण को समाप्त करना आदि। यदि सरकार न्यायशील मुद्राप्रचालन अपनाए, तो आर्थिक क्षेत्र में पनपनेवाली अनेक प्रकार की प्रथाएँ, परम्पराएँ, कुरीतियाँ, बुराइयाँ, दोष एवं अपराध स्वतः समाप्त हो जाते हैं। सरकार द्वारा मुद्राप्रचालन यदि न्यायशील बना रहे, तो समाज में अनेक प्रकार के आर्थिक दोष उत्पन्न ही नहीं होते।

मुद्राप्रचालन के माध्यम (Mediums of Currency Operation) :– एक हाथ से दूसरे हाथ में मुद्रा का हस्तांतरण ही मुद्राप्रचालन कहलाता है, जिसके निम्नलिखित माध्यम हो सकते हैं :–

1) **वस्तु (Commodity) :** किसी वस्तु को भी मुद्रा के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। वस्तु विनिमय प्रणाली में एक वस्तु ही दूसरी वस्तु को प्रतिस्थापित करती है। वस्तुमुद्रा का प्रयोग आंकिक मुद्राप्रणाली में प्रशस्त नहीं है।

2) **सिक्का (Coin) :** सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल आदि धातुओं के सिक्कों का प्रयोग भी मुद्रा के रूप में होता रहा है। सिक्कों का प्रयोग भी आंकिक मुद्राप्रणाली में प्रशस्त नहीं है।

3) **वचनपत्र (Promisory Note) :** कागज के नोटों को वचनपत्र कहते हैं। मुद्रा के रूप में कागजी नोटों का प्रयोग भी समाज में होता रहा है। बैंकखातों में दर्ज हुए विना प्रयुक्त होनेवाले वचनपत्रों का प्रयोग भी आंकिक मुद्राप्रणाली में प्रशस्त नहीं है।

4) **विलेखपत्र (Stamp Paper) :** आर्थिक विलेखपत्र भी मुद्रा के रूप में प्रयुक्त किए जाते रहे हैं। अनेक अवसरों पर मुद्रा के रूप में विलेखपत्र का प्रयोग होता है।

5) **बैंकचेक (Bank Cheque) :** बैंकों द्वारा अपने खाताधारकों को बैंकचेक की सुविधा भी प्रदान की जाती है। इन चेकों के माध्यम से भी मौद्रिक लेन–देन संभव होता है।

6) **बैंकड्राफ्ट (Bank Draft) :** मौद्रिक व्यवहार में बैंकड्राफ्ट का भी प्रयोग होता है। बैंकों द्वारा मौद्रिक लेखपत्र के रूप में बैंकड्राफ्ट जारी किया जाता है।

7) पेआर्डर (Pay Order) : *लिखित रूप में दिया गया पेआर्डर भी बैंकों अथवा अन्य मौद्रिक संस्थाओं के द्वारा मौद्रिक व्यवहार में प्रयुक्त किया जाता है।*

8) मनीआर्डर (Money Order) : *डाकघरों आदि के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजी जानेवाली मौद्रिक धनराशि को मनीआर्डर कहते हैं। मनीआर्डर का प्रयोग भी मौद्रिक व्यवहार के लिए किया जाता है।*

9) ई-ट्रांसफर (E-Transfer) : *मोबाइल, कम्प्यूटर, एटीएम मशीन अथवा अन्य किसी भी प्रकार की इलेक्ट्रानिक डिवाइस के माध्यम से किया जानेवाला मौद्रिक लेन-देन ई-ट्रांसफर कहलाता है। आंकिक मुद्रा प्रणाली के लिए यह माध्यम सर्वाधिक उपयुक्त है।*

10) हुण्डी (Hundi) : *नगद रसीद की भाँति लिखित रूप से जारी किये गये देयपत्र को हुण्डी कहते हैं। प्राचीनकाल में इस हुण्डी का प्रयोग भी मौद्रिक व्यवहार में होता रहा है।*

11) बाण्ड (Bond) : *भविष्य में किसी धनराशि विशेष के भुगतान का सहमतिपत्र ही बाण्ड कहलाता है। मौद्रिक व्यवहार में बाण्ड का प्रयोग भी किया जाता है।*

12) अन्य (Others) : *उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य माध्यमों से भी मौद्रिक व्यवहार किया जा सकता है। समय-समय पर मौद्रिक व्यवहार के नये-नये माध्यमों का आविष्कार हो सकता है।*

'निर्भार मुद्राप्रचालन' की न्यायशील प्रक्रिया (Just Process of Currency Operation) :-

निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रक्रिया का परिचय निम्नलिखित है :-

01) *सरकार द्वारा मुद्राप्रचालन संस्थान के रूप में राजकीय अधिकोष अथवा केन्द्रीय बैंक की स्थापना।*

02) *उसी संस्थान द्वारा मुद्रानिर्धारण, मुद्रानिगमन तथा मुद्राप्रचालन की न्यायशील व्यवस्था।*

03) *मुद्राप्रचालन सम्बन्धी नियमों, नीतियों, निर्णयों के न्यायशील समुचित स्वरूप का अवलम्बन।*

04) *मौद्रिक संस्थान द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्र एवं समाज में निर्भार मुद्राप्रचालन की सुनिश्चितता।*

05) *निर्भार मुद्राप्रचालन हेतु संस्थान द्वारा मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का निषेध।*

06) *मुद्रा की चलनगति को साम्यावस्था में बनाए रखनेवाले समस्त उपायों का अवलम्बन।*

07) *मौद्रिक शोषण, अनुद्यमिता, धनध्रुवीकरण, मौद्रिक गतिरोध एवं अन्य मौद्रिक समस्याओं आदि के सम्पूर्ण समाधान की सुनिश्चितता।*

08) *मुद्राप्रचालन को निर्भार बनाने के लिए मुद्रानिगमन को न्यायसंगत बनाना, तथा संतुलित तरलीकरण प्रणाली के द्वारा मुद्रानिगमन की व्यवस्था करना।*

09) *मुद्रानिगमन पर रेपो-प्रतिरेपो की व्याजदरों वाली अनैतिक व्यवस्था को पूर्णतः समाप्त करना।*

10) *मुद्रानिगमन एवं प्रचालन पर सभी प्रकार के टैक्सों की समाप्ति।*

11) *मुद्राप्रचालन सम्बन्धी व्ययों की पूर्ति राजकोष द्वारा संवहन करते हुए मुद्राप्रचालन को निःशुल्क बनाना।*

12) *सार्वजनिक मौद्रिक व्यवहार में किसी भी प्रकार के लेन-देन की स्वतन्त्रता के लिए नियमों, नीतियों, निर्णयों की अन्यायकारी बाधाओं का समापन।*

'निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली' की विशेषताएँ ***(Characteristics of Loadless Currency Operation System)*** *:– निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :–*

1) ***निर्व्याजता (Interestfreeness) :*** *निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली पूर्णतः निर्व्याजता की नीति का पालन करती है। मुद्रा पर व्याज की प्रथा मानवीय समाज का वह अभिशाप है, जिसने घोर असभ्यता, दुःख, दरिद्रता एवं शोषण का वातावरण उत्पन्न किया है, जिससे त्रस्त होकर अनगिनत लोगों को आत्महत्या के लिए विवश होना पड़ा है। व्याज की वसूली में कितने ही लोगों की हत्याएँ हुई हैं, कितने ही परिवार भयानक विपदाओं में फँसे हैं। व्याजप्रथा मानवसमाज में नासूर की भाँति भयंकर पीड़ादायक सिद्ध हुई है। निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली इस व्याजप्रथा को समाप्त करने में पूर्णतः समर्थ होने के कारण निर्व्याजता की विशेषता से युक्त है। निर्व्याजता का लक्षण ही इस प्रणाली का प्रथम लक्षण है।*

2) ***करमुक्तता (Taxfreeness) :*** *निर्भार मुद्राप्रचालन की दूसरी विशेषता है– करमुक्तता। मुद्राप्रचालन का करमुक्त होना न्यायसंगत है, क्योंकि मुद्रा पर किसी भी प्रकार का भार मुद्रा की चलनगति को प्रभावित करता है, मौद्रिक प्रवाह के मार्ग में गतिरोध उत्पन्न करता है। मौद्रिक गतिरोध सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को कुंठित कर डालता है। अतः इस न्यायसंगत प्रणाली में मुद्रा पर किसी प्रकार का कर या राजस्व आदि नहीं लगाया जा सकता। निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली की यह द्वितीय विशेषता भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।*

2) ***निःशुल्कता (Chargefreeness) :*** *मुद्राप्रचालन को निर्भार बनाए रखने के लिए मौद्रिक व्यवहार की निःशुल्कता भी आवश्यक होती है। मुद्रा के लेन–देन पर किसी भी प्रकार के शुल्क का प्रावधान मुद्राप्रचालन के मार्ग में गतिरोध उत्पन्न करता है, जिससे अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। मुद्राप्रचालन कार्य राज्य की ओर से जनसेवा के रूप में व्यवस्थित होती है, तथा मुद्राप्रचालन सम्बन्धी व्ययों की पूर्ति राजकोष द्वारा होती है। निःशुल्कता को निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली की तीसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता के रूप में देखा जा सकता है।*

निर्भार मुद्राप्रचालन का महत्त्व ***(Importance of Loadless Currency Operation)*** *:– निर्भार मुद्राप्रचालन के महत्त्व को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से भलीभाँति समझा जा सकता है :–*

1) ***आर्थिक न्याय में सहायक (Helpful to Economical Justice) :*** *आर्थिक न्याय की स्थापना में निर्भार मुद्राप्रचालन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आर्थिक न्याय के विना किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीयता, समाज की सामाजिकता, मानव की मानवता प्रतिष्ठित नहीं हो सकती। कोई भी मानवीय समाज आर्थिक न्याय के लक्षणों से युक्त होने की आवश्यकता अनुभव करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह स्वयं को दूसरों के समान हिताधिकारी मानकर ही समाज का सदस्य बनता है। आर्थिक समाधिकारिता ही अन्य समाधिकारिताओं से श्रेष्ठ है। यहाँ तक कि 'आर्थिक न्याय' को समस्त न्यायों का न्याय कहा जाता है। आर्थिक न्याय का सम्बन्ध मौद्रिक व्यवहार से प्रत्यक्षतः जुड़ा हुआ है। मौद्रिक नीतियों में छल, कपट, षड़यन्त्र वाली कूटनीतियों के द्वारा मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि थोपकर जनसाधारण के श्रम का शोषण किया जा सकता है, जिससे*

उनके मूलभूत हिताधिकारों का नाश होता है। अतः व्याज, टैक्स एवं शुल्क से मुक्त मुद्राप्रचालन किसी भी राष्ट्र की मौद्रिक नीति का महत्त्वपूर्ण अंग है।

2) ***आर्थिक विकास में सहायक*** **(Helpful to Economic Development) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास में प्रत्यक्ष रूप से सहायक सिद्ध होती है। सहज मौद्रिक तरलीकरण प्रणाली द्वारा तो केवल उन्हीं व्यक्तियों को मौद्रिक पूँजी सुलभ हो पाती है, जिनके पास कोई मूल्यवान स्थूल सम्पदा विद्यमान हो। किन्तु निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली द्वारा उन व्यक्तियों को भी मौद्रिक पूँजी सुलभ करायी जा सकती है, जिनके पास कोई मूल्यवान स्थूल सम्पदा सुलभ नहीं है। मौद्रिक पूँजी के विना विनियोग संभव नहीं होता। विनियोग के विना उत्पादन नहीं होता। उत्पादन के विना विनिमय, वितरण और उपभोग आदि कोई भी आर्थिक क्रियाएँ संभव नहीं होतीं। आर्थिक क्रियाओं की गतिशीलता के विना कोई आर्थिक विकास संभव नहीं होता। अतः निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।*

3) ***जीविकासृजन में सहायक*** **(Helpful to Create Employment) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली जीविकासृजन में भी सहायक है, क्योंकि यह रोजगार के संसाधनों एवं अवसरों की वृद्धि करती है। निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली अनेक प्रकार के उद्यमों की स्थापना में सहायक होती है, जिससे जीविकोपार्जन अथवा रोजगार के अनन्त अवसर उत्पन्न होते हैं, तथा अनाजीविका अथवा बेरोजगारी की भयंकरता समाप्त होती है।*

4) ***दरिद्रता के उन्मूलन में सहायक*** **(Helpful to Poverty Removal) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली दरिद्रता के उन्मूलन में भी सहायक है। लोग निर्भार मौद्रिक पूँजी प्राप्त करके अपने लिए जीविकोपार्जन या धनोपार्जन के संसाधनों का विकास कर सकते हैं, जिससे उनकी आर्थिक समृद्धि बढ़ती है, और समाज से दरिद्रता, निर्धनता, गरीबी एवं अभावग्रस्तता का अन्त होता है।*

5) ***न्यायशील त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था लागू करने में सहायक*** **(Helpful to implementation of Just Triangular Economy) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली किसी भी राष्ट्र में न्यायशील त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था को प्रतिष्ठित करने में सहायक है। त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था का अभिप्राय एक ऐसी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से है, जो वास्तविक एवं न्यायशील अर्थव्यवस्था है। न्यायशील अर्थशास्त्र की दृष्टि से उत्पादन के केवल तीन साधन होते हैं– श्रम, पूँजी, सुविधा। इसप्रकार किसी भी उत्पादन के केवल तीन स्वामी सिद्ध होते हैं– श्रमिक, पूँजीपति, सरकार। तदनुसार उत्पादन लागत एवं लाभ का त्रिकोणीय विभाजन ही न्यायशील अर्थव्यवस्था का लक्षण है। ऐसी न्यायशील त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था की प्रतिष्ठा किसी भी राष्ट्र में उपरोक्त निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली अपनाकर बड़ी सहजतापूर्वक करी जा सकती है, क्योंकि मौद्रिक पूँजी की सर्वसुलभता के कारण पूँजीपतियों का वर्चस्व समाप्त हो जाता है, तथा सरल पूँजीविनियोग के कारण उद्यमों की स्थापना सरल हो जाती है, क्योंकि श्रम और सुविधाएँ*

तो सदैव सहज ही सुलभ रहती हैं। उद्यम स्थापना की मूल समस्या तो केवल पूँजीगत होती है। इस भारी समस्या के समाधान में निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

6) ***पूँजीवादी शोषण से बचाव में सहायक (Helpful to Save from Exploitation of Capitalism) :*** *निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली पूँजीवाद द्वारा शोषण किए जाने से जनसाधारण को बचाने में सहायक है। पूँजीपतियों द्वारा व्याज आदि के माध्यम से साधारण जनता के परिश्रमपूर्ण उपार्जन को खींचकर अपने खातों में जमा करने का शोषणकारी प्रयास किया जाता है। पूँजीपति अपनी पूँजी के बल पर सरकार और श्रमिकवर्ग को अपना दास बनाने में समर्थ हो जाता है। व्याज के माध्यम से संभव हुआ शक्ति का यह भयंकर केन्द्रीकरण सदैव हानिकारक होता है। व्याज, टैक्स एवं शुल्क के भार से मौद्रिक पूँजी सामान्य जनों के लिए दुर्लभ हो जाती है। मौद्रिक पूँजी की इस दुर्लभता से पूँजीपतियों को अपनी पूँजी के बल से उद्यमों पर स्वत्वाधिकारी बनने का अवसर प्राप्त हो जाता है। साथ ही पूँजी के अभाव से उत्पादन कार्य प्रभावित होता है, जिससे सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पतित एवं कुंठित होकर भयंकर दरिद्रता से ग्रस्त हो जाती है। वास्तव में पूँजी ही इस जगत् का मूलाधार बनी हुई है। कहावत प्रसिद्ध है–**'दादा बड़ा न भैया, सबसे बड़ा रुपैया।'** पूँजी पर जिसका अधिपत्य हो जाता है, सब कुछ उसके अधीन हो जाता है। अतः पूँजी की स्वतन्त्रता ही वास्तविक स्वतन्त्रता है। पूँजी का आधार मुद्रा है, अतः निर्भार मुद्राप्रचालन की यह नीति ही पूँजी को सर्वसुलभ बनाकर पूँजी के केन्द्रीकरण को समाप्त करती है, जिससे पूँजीपतियों द्वारा किए जानेवाले शोषण से जनता का बचाव होता है।*

निर्भार मुद्राप्रचालन के लाभ (Advantages of Loadless Currency Operation) :–

किसी राष्ट्र में निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अपनाने से राष्ट्र के नागरिकों को निम्नलिखित लाभ प्राप्त हो सकते हैं :–

1) ***व्याज की बचत :*** *निर्भार मुद्राप्रचालन की इस न्यायशील प्रणाली के द्वारा मौद्रिक पूँजी सरल, स्वतन्त्र एवं सुलभ होने के कारण किसी व्यक्ति, संस्था या सरकार को व्याजयुक्त देशी या विदेशी ऋण नहीं लेना पड़ता, और लिए गए ऋणों पर व्याज के भुगतान से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। व्याजयुक्त ऋण सदैव हानिकारक होता है। व्याज के रूप में खींची गयी धनराशि वास्तव में श्रम द्वारा उपार्जित राशि का अपहरण है। इसप्रकार होनेवाले श्रम के शोषण की समस्या भी समाप्त हो जाती है। ऋणों के लिए व्याज के रूप में चुकायी जानेवाली धनराशि की बचत होती है, जो इस प्रणाली का प्रथम प्रत्यक्ष लाभ है।*

2) ***टैक्स की बचत :*** *मौद्रिक व्यवहार पर किसी भी प्रकार का करारोपण कभी न्यायशील नहीं हो सकता। न्यायशील मुद्राप्रचालन प्रणाली सदैव निर्भार होती है। उस पर कोई करभार लादना न्यायसंगत नहीं है। राजस्व, लगान, लेवी, चुंगी, टैक्स आदि किसी भी प्रकार का भार हटाने से श्रमिकों अथवा उद्यमों के धन की बचत होती है, जो इस प्रणाली का दूसरा प्रत्यक्ष लाभ है।*

3) शुल्क की बचत : *मौद्रिक व्यवहार पर किसी भी प्रकार के शुल्क का भार भी मौद्रिक नीति की न्यायशीलता पर प्रश्नचिह्न लगाता है। अतः निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली में निःशुल्कता की व्यवस्था के कारण अनावश्यक व्ययों से श्रमिकों एवं उद्यमों को हानि उठानी पड़ती है। मुद्राप्रचालन सम्बन्धी व्ययों की पूर्ति राजकोष द्वारा व्यवस्थित होने के कारण निःशुल्क मुद्राप्रचालन संभव होता है, जिससे मुद्रा के प्रयोक्ताओं के धन की बचत होती है, जो इस प्रणाली का तीसरा प्रत्यक्ष लाभ है।*

4) अन्य लाभ : *निर्भार मुद्राप्रचालन के प्रयोग से अन्य भी कई प्रकार के लाभ हो सकते हैं, जैसे– उद्यम हेतु आवश्यक पूँजी की सुलभता, आर्थिक दासता से छुटकारा आदि।*

निर्भार मुद्राप्रचालन के प्रभाव (Effects of Loadless Currency Operation) :– *निर्भार मुद्राप्रचालन की इस न्यायशील प्रणाली के दो प्रभाव हो सकते हैं– प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष। समाज या राष्ट्र पर पड़नेवाले इन दोनों प्रभावों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है :–*

क) निर्भार मुद्राप्रचालन के प्रत्यक्ष प्रभाव (Direct Effects) : *निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली निम्नलिखित चार मौद्रिक समस्याओं पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है, तथा इन चारों समस्याओं से मुक्ति प्रदान करती है :–*

1) मौद्रिक शोषण से मुक्ति (Freedom from Monetary Exploitation) : *निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली जनता को मौद्रिक शोषण से मुक्ति प्रदान करती है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि के रूप में श्रम का शोषण प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। उधार या ऋण के रूप में पूँजी प्राप्त करनेवालों को व्याज का भार ढोना पड़ता है। इसीप्रकार से टैक्स और शुल्क भी मौद्रिक शोषण के ही प्रतीक हैं, क्योंकि मुद्रा कोई वास्तविक संसाधन नहीं है। अतः मौद्रिक लेन–देन पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स या शुल्क केवल शोषण ही सिद्ध होता है।*

2) अनुद्यमिता से मुक्ति (Freedom from Idleness) : *कर्म किए विना फल भोगने की इच्छा ही अनुद्यमिता है। इसे कामचोरी और हरामखोरी भी कह सकते हैं। मुद्रा पर व्याज, टैक्स या शुल्क के रूप में धन खींचकर अपना जीवनयापन करने की इच्छावाले व्यक्तियों अथवा सत्ताओं में अकर्मण्यता प्रवेश कर जाती है, जिससे उनकी उद्यमिता समाप्त हो जाती है। धन सदैव श्रम का प्रतिफलन है। अतः परिश्रम के विना धन नहीं प्राप्त करना चाहिए। परिश्रमपूर्वक उपार्जन ही न्यायशील सिद्ध हो सकता है। व्याज आदि के रूप में दूसरों के श्रम द्वारा उपार्जित धन को खींचकर अपना जीवनयापन करने की चेष्टा कभी न्यायसंगत नहीं हो सकती। इससे कर्मठता समाप्त होती है। उद्यमों की स्थापना कम होने लगती है। उद्यमों का संचालन एवं विकास ठहरने से समाज या राष्ट्र का आर्थिक विकास कुंठित होने लगता है। आर्थिक प्रगति और समृद्धि की संभावनाएँ समाप्त होने लगती हैं। इन सभी समस्याओं को जन्म देनेवाली अनुद्यमिता के रोग से बचने के लिए निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अत्यधिक प्रभावशील है।*

3) **धनध्रुवीकरण से मुक्ति (Freedom from Polarization of Wealth) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली धन के ध्रुवीकरण से मुक्ति देने में भी समर्थ है, क्योंकि मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क की दुर्नीति को समाप्त करके यह न्यायशील प्रणाली अनावश्यक एवं अनैतिक धनसंग्रह के सभी अवसरों को समाप्त करती है। श्रम द्वारा उपार्जनपूर्वक किया जानेवाला धनसंचय मनुष्य को सभ्य बनाता है, किन्तु अनुपार्जित धनसंग्रह मनुष्यों में दुर्गुणों एवं दोषों को जन्म देता है। वे दुष्ट होकर दूसरों के लिए हानिकारक सिद्ध होने लगते हैं। पूँजी से व्याज और व्याज से पूँजी के निर्माण की यह गणित किसी सभ्य समाज का लक्षण नहीं हो सकती। अतः इस पूँजी पर व्याज आदि की दूषित नीतियों के परिणामों से बचने के लिए निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अत्यन्त प्रभावशाली है।*

4) **मौद्रिक गतिरोध से मुक्ति (Freedom from Hurdles in Velocity of Money) :** *मुद्रा की चलनगति को निर्भार मुद्राप्रचालन की यह न्यायशील प्रणाली प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। मुद्रा के शिर पर व्याज, टैक्स, शुल्क का भार मुद्रा की चलनगति को अवरुद्ध करता है। इस मौद्रिक गतिरोध को समाप्त करने के लिए निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली किसी भी समाज या राष्ट्र के लिए अत्यन्त प्रभावपूर्ण सिद्ध होती है। व्याज, टैक्स, शुल्क आदि के भार से दबी हुई मुद्रा कभी तीव्र गति से नहीं चल सकती। मुद्रा के चलनवेग को समर्थ बनाए रखने के लिए विश्व की समस्त राष्ट्रीय सरकारों को इस निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली का अनिवार्य अवलम्बन लेना चाहिए, क्योंकि यह सम्पूर्ण राष्ट्र के मौद्रिक व्यवहार को तीव्र करके आर्थिक विकास की समस्त संभावनाओं को शीघ्र ही साकार करने में समर्थ है। हजारों वर्षों की आर्थिक विकासयात्रा को यह निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली दशकों में ही पूर्ण कर सकती है। शताब्दियों एवं सहस्राब्दियों को दशकों में परिवर्तित करने यह प्रणाली समर्थ है।*

ख) निर्भार मुद्राप्रचालन के अप्रत्यक्ष प्रभाव (Indirect Effects) : *निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली अपनाने से समाज या राष्ट्र के आर्थिक व्यवहारों पर निम्नलिखित अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ते है :–*

1) **पूँजी के अभाव से मुक्ति में सहायक (Helpful to get Freedom from Scarcity of Capital) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली अपनानेवाले राष्ट्र में पूँजी का अभाव उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि व्याज, टैक्स एवं शुल्क से मुक्त ऋण या उधार प्राप्ति की सुविधा सार्वजनिक रूप से सुलभ रहती है। अतः आवश्यकतानुसार जिस समय जितनी मौद्रिक पूँजी की आवश्यकता हो, उतनी पूँजी तुरन्त सुलभ होने के कारण पूँजी के अभाव की कोई समस्या सामने नहीं आती।*

2) **बेरोजगारी से मुक्ति में सहायक (Helpful to get Freedom from Unemployment) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली के कारण कोई भी व्यक्ति अपने ज्ञान और कौशल के अनुरूप उद्यम स्थापित करने के लिए पर्याप्त मात्रा में मौद्रिक पूँजी प्राप्त कर सकता है, जिसके लिए व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का भार वहन करने की आवश्यकता नहीं रहती। स्पष्ट है कि बेरोजगारी से छुटकारा पाने में भी यह निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली सहायक है। अतः बेरोजगारी को यह प्रणाली प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है।*

3) ***दरिद्रता से मुक्ति में सहायक* (Helpful to get Freedom from Poverty) :** *यह निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली सम्पूर्ण राष्ट्र को दरिद्रता से मुक्ति देने में समर्थ है। कृषि, वाणिज्य, राज्य, नेतृत्व आदि जिस किसी भी कार्य के लिए मौद्रिक पूँजी की आवश्यकता हो, उसकी पूर्ति करने में यह प्रणाली निश्चित रूप से कारगर सिद्ध होती है, जिससे आर्थिक आय के उपार्जन सम्बन्धी अवसरों की वृद्धि होती है। यह प्रणाली आर्थिक आय में वृद्धि करके दरिद्रता से मुक्ति प्रदान करती है।*

4) ***दासता से मुक्ति में सहायक* (Helpful to get Freedom from Slavery) :** *मौद्रिक ऋण अथवा उधार पर व्याज की प्रथा तो हानिकारक है ही, उस पर टैक्स एवं शुल्क का भार उसे और असहनीय बना देता है। एक बार ऋण या उधार प्राप्त करनेवाला उसके व्याज, टैक्स और शुल्क से इतना दब जाता है कि प्रायः उसकी सम्पूर्ण आय इस भार को ढोने में ही समाप्त हो जाती है, तथा मूल ज्यों का त्यों शेष बना रहता है। फलस्वरूप 'बँधुवा मजदूरी प्रथा' जैसी भयंकर समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। मनुष्य अपने ऋणदाताओं को चुकाए जानेवाले व्याजादि के बोझ से दबकर उनकी धौंस सुनने और उनका दास बनने को विवश हो जाता है। भारयुक्त ऋण या उधार प्राप्त करनेवाले मनुष्य समाज में अपने स्वाभिमान और स्वतन्त्रता की रक्षा नहीं कर पाते। अतः निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली मनुष्यों को स्वस्थ ऋण प्रदान करके उनकी स्वतन्त्रता की रक्षा करती है, तथा उन्हें दासता से मुक्ति प्रदान करती है।*

5) ***आर्थिक कुंठा से मुक्ति में सहायक* (Helpful to get Freedom from Economic Backwardness) :** *निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली अपनाने वाले राष्ट्र के आर्थिक विकास को प्रबल प्रोत्साहन प्राप्त होता है, क्योंकि इस प्रणाली के द्वारा मौद्रिक पूँजी प्रचुर मात्रा में सुलभ रहती है। न्यायशील मौद्रिक नीति के अभाव में ही आर्थिक विकास कुण्ठित होता है, अथवा विकास की गति धीमी होती है। न्यायशील मौद्रिक नीति पर आधारित यह प्रणाली आर्थिक विकास के लिए संजीवनी बूटी के समान है, जो किसी भी आर्थिक रूप से कुंठित राष्ट्र को विकसित करने में स्वतः समर्थ है।*

6) ***मुफ्तखोरी पर विराम* (Stop on Unaccrued Consumption) :** *किसी भी राष्ट्र में निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील प्रणाली लागू होने पर मौद्रिक पूँजी का केन्द्रीकरण समाप्त होने लगता है, अथवा केन्द्रीभूत पूँजी की मूल्यवत्ता श्रम के विना क्षीण हो जाती है, क्योंकि मौद्रिक पूँजी सरल, स्वतन्त्र एवं सर्वसुलभ होने से प्रत्येक श्रमिक अथवा उद्यमी को वांछित पूँजी पर्याप्त मात्रा में राजकीय अधिकोषालय अथवा केन्द्रीय मौद्रिक संस्थान से तरलीकरण या ऋण या उधार के रूप में सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाती है। स्वपूँजी विनियोग के कारण सेठों या पूँजीपतियों की पूँजी का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। उनके द्वारा संग्रहित पूँजी की माँग बाजार में समाप्त हो जाती है, जिससे उन्हें व्याज आदि के रूप में अनैतिक धनोपार्जन करने के अवसर सुलभ नहीं रह जाते। फलतः पूँजीपतियों द्वारा दूसरों के श्रम का शोषण करने के अवसर समाप्त हो जाते हैं और मुफ्तखोरी पर विराम लग जाता है।*

❀❀❀

निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली की सर्वस्वीकार्यता ***(Universal Acceptance of Loadless Currency Operation System)*** *:– निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली को भी सर्वस्वीकार्य जानना चाहिए। यदि इस पर जनतमसंग्रह किया जाए, तो 75% से 99% तक लोकमत इस प्रणाली के पक्ष में प्रमाणित हो सकता है, क्योंकि कोई भी बुद्धिमान प्राणी इस न्यायशील निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली से प्रभावित हुए विना नहीं रह सकता। इसकी सम्पूर्ण कार्यप्रणाली, महिमा, लाभ, प्रभाव एवं परिणामों को पढ़कर, सुनकर, समझकर कोई भी मेधावी व्यक्ति सहज ही इसे स्वीकार करने को उत्सुक हो सकता है। अतः इस न्यायशील निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली को भारतसहित सम्पूर्ण विश्व के समस्त राष्ट्रों में जनमतसंग्रह अथवा आमराय के आधार पर लागू किया जा सकता है। किसी भी राष्ट्र में इस पर प्रचण्ड बहुमत सिद्ध किया जा सकता है। चंद मूर्खों एवं धूर्तों को छोड़कर प्रायः सम्पूर्ण मानवता इसके लिए पूर्णतः सहमत सिद्ध होगी। हमें राष्ट्रीय मौद्रिकनीति को निर्भार बनाने के लिए मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क को समाप्त करना चाहिए। इससे मौद्रिक शोषण, अनुद्यमिता, धनध्रुवीकरण, मौद्रिक गतिरोध एवं अन्य मौद्रिक समस्याओं का समाधान अवश्य होगा। कहावत प्रसिद्ध है–* ***'बुद्धिर्यस्य बलं तस्य।'*** *बुद्धि ही वास्तविक बल है, हमें जनबल, धनबल, शस्त्रबल आदि के द्वारा शासन चलाने की बर्बरयुगीन दण्डपरम्परा से बाहर निकलकर अपने बुद्धि–विवेक का सहारा लेना चाहिए, तथा विवेकशील नियम, नीति, निर्णयों के द्वारा अपनी समस्त राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान करना चाहिए, चाहे वे आर्थिक समस्याएँ हों अथवा अन्य। संसार की कोई भी समस्या का समाधान संभव है, यदि समस्या के कारणों को जानने का सूक्ष्म सद्विवेक हमारे भीतर जागृत हो। वैसे भी हमें किसी के भी द्वारा किए गए विवेकशील, सर्वहितकारी प्रतिपादनों को सहजतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि वे प्रमाणिक होते हैं और उनमें कोई खूनीक्रान्ति, भ्रामक आन्दोलन, निरर्थक अभियान, अशाश्वत और अनर्थकारी व्यवस्थाओं का कोई स्थान नहीं होता। विवेकहीन आदेशों, उपदेशों, आज्ञाओं, मार्गदर्शनों, परामर्शों, विचारों, लेखों, पुस्तकों, ग्रन्थों की मूढ़ता से ऊपर उठकर विवेकसम्पन्न ज्ञान–विज्ञान सम्मत प्रतिपादनों एवं सद्ग्रन्थों के अनुकूल आचार–व्यवहार अपनाना चाहिए, अन्यथा अन्तर्द्वन्द्व, गृहयुद्ध एवं राष्ट्रीय संघर्षों का भीषण संकट उत्पन्न हो जाता है। जो अन्ततः हमारे विनाश का कारण बनता है। अतः हमें अपनी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक संकटों एवं समस्याओं का समाधान सदैव विवेकपूर्वक करना चाहिए। ध्यान रहे कि विवेकशील प्रतिपादन सदैव सरल एवं स्पष्ट होते हैं। उनमें किसी प्रकार का छल–कपट, दाँवपेंच, जटिलता, जंजाल, षड़यन्त्र का अस्तित्व नहीं रहता। विवेकशील प्रतिपादन सदैव स्पष्ट, सुग्राह्य एवं सर्वहितकारी होते हैं। वे इसीलिए सर्वस्वीकार्य भी बने रहते हैं अथवा उनकी स्वीकार्यता का लोकमत सदैव सिद्ध हो सकता है, यदि खुले रूप में मतसंग्रह किया जाए।*

❁❁❁

निर्भार मुद्राप्रचालन में सावधानियाँ (Precautions in Loadless Currency Operation) *:– निर्भार मुद्राप्रचालन में मौद्रिक संस्थान को निम्नलिखित सावधानियाँ वर्तनी चाहिए :–*

01) *मुद्रा को निर्भार बनाए रखने के लिए व्याज, टैक्स, शुल्क अथवा अन्य किसी भी भार से मुद्रा को सदैव बचाए रखने का प्रयास किया जाए।*

02) *ऋण अथवाा उधार के रूप में प्रदान की जानेवाली मुद्रा पर किसी सरकारी अथवा गैर सरकारी सत्ता, संस्था अथवा व्यक्ति द्वारा मुद्रा पर व्याज लगाने की व्यवस्था न अपनाई जाए।*

03) *केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा के निगमन अथवा तरलीकरण की प्रक्रिया पर 'रेपो' अथवा 'प्रतिरेपो' व्याजदर के रूप में अन्यायकारी कुत्सित व्याजखोरी की नीति नहीं अपनाई जाए।*

04) *सरकार द्वारा मुद्राप्रचालन की प्रक्रिया में भी व्याज, टैक्स, शुल्क आदि की अनैतिक व्यवस्था नहीं अपनाई जाए, तथा मुद्रा को सदैव निर्व्याज, करमुक्त एवं निःशुल्क बनाए रखने का नैतिक प्रयास किया जाए।*

05) *ऋण पर व्याज के स्थान पर लाभ में हिस्सेदारी का प्रावधान किया जाए, ऋण किसी उपार्जनशील कार्य के लिए ही प्रदान किया जाए। तरलीकरण के लिए स्थूल सम्पदा सुलभ न होने पर ही ऋण की व्यवस्था अपनायी जाए।*

06) *तरलीकरण को मुद्रानिगमन की प्रक्रिया माना जाए, तरलीकरण करने का अधिकार केवल केन्द्रीय संस्थान अथवा उससे सम्बद्ध या प्रशस्त किसी संस्थान को ही प्रदान किया जाए। केन्द्रीय बैंक एवं जनता के बीच मध्यस्थों, बैंकों एवं अन्य संस्थाओं को हटाया जाए। मौद्रिक तरलीकरण को जनसेवा के रूप में संचालित किया जाए।*

07) *प्रतिभूति के अभाव में प्रदान करी जानेवाली धनराशि को ही ऋण या उधार के रूप में परिभाषित किया जाए, तथा उस पर व्याज, टैक्स एवं शुल्क की व्यवस्था न अपनाई जाए।*

08) *ऋण या उधार को निवेश या विनियोग से भिन्न माना जाए। ऋणदाता को केवल लाभ में हिस्सेदार माना जाए, तथा निवेशक को लाभ एवं हानि दोनों में हिस्सेदार माना जाए। उधार को सौहार्दपूर्ण व्यवहार माना जाए, जो लाभ–हानि के प्रभाव से सदा मुक्त रहे।*

09) *किसी भी उद्यम को तीन प्रकार से पूँजी प्राप्त करने का अधिकार दिया जाए– तरलीकरण द्वारा, ऋण द्वारा, निवेश द्वारा। इन तीनों अवस्थाओं में धनदाता के उद्यमसम्बन्ध को न्यायपूर्वक इसप्रकार से परिभाषित किया जाए। तरलीकरणकर्ता को लाभ–हानि दोनों से मुक्त माना जाए। ऋणदाता का सम्बन्ध केवल लाभ से तथा निवेशक का सम्बन्ध लाभ–हानि दोनों से माना जाए।*

10) *संतुलित तरलीकरण एवं निर्व्याज ऋणसेवा द्वारा ही उद्यम में निवेश हेतु पूँजी सुलभ करायी जाए।*

11) *राजकीय अधिकोष या केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा को दुर्लभ होने से बचाया जाए। मुद्रा को सदैव सहज रूप से सर्वसुलभ बनाए रखने की मौद्रिक नीति अपनाई जाए। मुद्रा की दुर्लभता ही मौद्रिक व्याज की प्रथा को जन्म देती है।*

12) मुद्रा की निर्भारता को राज्य की न्यायशीलता का एक प्रमुख लक्षण माना जाए, क्योंकि मुद्रा को व्याज, टैक्स, शुल्क आदि से मुक्त रखनेवाला राज्य ही लोकहितकारी होता है।

13) संसाधन के स्थान पर उत्पादन को उपभोग की वस्तु माना जाए, जिससे कि मौद्रिक संसाधन पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि के द्वारा उपभोग की कुत्सित नीति का अन्त हो सके। राजनैतिक कारणों से ही जनता के बीच मुद्रा पर व्याजखोरी की प्रथा प्रचलित होती है।

वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य से निर्भार मुद्राप्रचालन का सम्बन्ध (Relation of Prices of Commodities and Services with Loadless Currency Operation) *:– निर्भार मुद्राप्रचालन से भी मुद्रा की सुलभता पर्याप्त मात्रा में बनी रहती है, क्योंकि मुद्रा पर व्याज, टैक्स या शुल्क रूपी भार ही उसे दुर्लभ बनाते हैं। किन्तु बाजार में मुद्रा की मात्रा का प्रभाव निर्भार मुद्राप्रचालन से नहीं होता, क्योंकि मुद्रा के निगमन और प्रचालन में भेद है। मुद्रानिगमन का अभिप्राय बाजार में मुद्रा की मात्रा से है, तथा मुद्राप्रचालन का सम्बन्ध बाजार में विद्यमान की मात्रा के लेन–देन अथवा आदान–प्रदान से है। मुद्रानिगमन का सम्बन्ध तरलीकरण से है। किन्तु मुद्राप्रचालन का सम्बन्ध किसी भी मौद्रिक लेन–देन से है, जो ऋण–उधार, क्रय–बिक्रय आदि किसी भी रूप में हो सकता है। मौद्रिक तरलीकरण की प्रक्रिया से ऋण या उधार का कोई सम्बन्ध नहीं है। मुद्रानिगमन संस्थान को केवल तरलीकरण करना चाहिए। ऋण या उधार की प्रक्रिया सामान्य लेन–देन की परिभाषा के अन्तर्गत सम्मिलित है। अतः मौद्रिक ऋण या उधार किसी भी प्रकार से वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य को प्रभावित नहीं करती, अथवा किसी मँहगाई या सस्ताई से इनका सीधा कोई सम्बन्ध नहीं है। यद्यपि तरलीकरण द्वारा जारी प्रत्याभूत मुद्रा की मात्रा का प्रभाव भी वस्तुओं के मूल्यनिर्धारण पर नहीं पड़ता। केवल न्यूनप्रत्याभूत या अप्रत्याभूत मुद्रा जारी करने की गलत नीति ही मुद्रासंकुचन या मुद्रास्फीति को जन्म देती है, जो किसी भी वस्तु अथवा सेवा के मूल्य को प्रभावित कर सकती है। किन्तु उधार या ऋण से बाजार में वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य के निर्धारण पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पड़ सकता, क्योंकि ऋण या उधार की प्रक्रिया द्वारा बाजार में मुद्रा की किसी भी उपलब्ध मात्रा में संकुचन या स्फीति नहीं उत्पन्न होती।*

मुद्रासंकुचन एवं मुद्रास्फीति से निर्भार मुद्राप्रचालन का सम्बन्ध (Relation of Monetary Deflation and Inflation with Loadless Currency Operation) *:– यहाँ पर मुद्रासंकुचन एवं मुद्रास्फीति के वास्तविक अभिप्राय को समझना आवश्यक है। मुद्रासंकुचन का अभिप्राय प्रत्याभूत सम्पदा के बाजारमूल्य से न्यून धनराशि तक मुद्रा के निगमन से है। मौद्रिक तरलीकरण के माध्यम से निगमित की गई तरलीकृत धनराशि यदि किसी सम्पदा के सामान्य बाजारमूल्य से न्यून हो, तो उसे 'मुद्रासंकुचन' के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसीप्रकार से यदि उस सम्पदा के सामान्य बाजारमूल्य से अधिक मात्रा में तरलीकृत धनराशि निगमित की जाए, तो उसे 'मुद्रास्फीति' के रूप में परिभाषित किया जाता है। अन्य किसी भी रूप में मुद्रासंकुचन एवं मुद्रास्फीति की परिभाषा वास्तविक नहीं है।*

मुद्रासंकुचन और मुद्रास्फीति की उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि इन दोनों मौद्रिक दशाओं का सम्बन्ध बाजार में उपलब्ध मुद्रा की कुल मात्रा से है। मौद्रिक संस्थान द्वारा बाजार में कुल कितनी मात्रा में और किस आधार पर मुद्रा जारी की गई है, इस तथ्य पर मुद्रा के संकुचन या स्फीति की दशा निर्भर होती है। अतः मुद्रानिगमन से इन दोनों मौद्रिक दशाओं का सीधा सम्बन्ध होने के कारण, मुद्राप्रचालन से इनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध प्रमाणित नहीं होता। मुद्राप्रचालन की प्रक्रिया बाजार में मुद्रानिगमन संस्थान द्वारा उपलब्ध करायी गयी मात्रा तक ही सीमित रहती है। मुद्राप्रचालन द्वारा बाजार में मुद्रा की मात्रा को घटाया–बढ़ाया नहीं जाता, बल्कि उसका केवल उपयोग किया जाता है। स्पष्ट है कि निर्भार मुद्राप्रचालन का सम्बन्ध ा मुद्रासंकुचन अथवा मुद्रास्फीति से बिलकुल भी नहीं है।

ऋण पर व्याज का निषेध एवं लाभ की प्रशस्तता ***(Prohibition of Interest on Loan and Recommendation of Profit)*** *:– मौद्रिक ऋण पर व्याज की प्रथा कभी न्यायशील नहीं सिद्ध हो सकती, क्योंकि मुद्रा वास्तविक नहीं, वैकल्पिक साधन है। संसाध ानों का विकल्पमात्र होने के कारण यह स्वयं कोई उत्पादक वस्तु नहीं होती, बल्कि मुद्रा की उत्पादकता श्रम के संयोग द्वारा ही सिद्ध हो सकती है। श्रमहीन मुद्रा यदि उत्पादक सिद्ध नहीं हो सकती, तो मुद्रा पर व्याज की नीति कभी न्यायशील नहीं हो सकती। अतः मुद्रा पर व्याज की प्रथा को प्रचलन में कभी प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता। ऋण अथवा उधार यदि किसी उत्पादक उद्यम में निवेशार्थ ग्रहण किया जा रहा हो, तो उसे उद्यम के उत्पादन पर होनेवाले लाभ का एक आनुपातिक अंश प्रदान किया जा सकता है, क्योंकि मुद्रा के माध्यम से श्रम द्वारा जो उत्पादन किया गया है, उसमें मुद्रा निवेश की भाँति प्रयुक्त हुई है। अतः पूँजीनिवेश का हितलाभ उसे दिया जा सकता है। किन्तु निवेश का पूर्ण स्वरूप ऋण में प्रतिष्ठित न होने के कारण उसे हानि में भागीदार नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि उद्यम पर ऋणदाता का कोई स्वामित्व सिद्ध नहीं होता, न ही वे उसके द्वारा उद्यम के स्वामी के रूप में कोई शारीरिक या मानसिक श्रम करना प्रमाणित होता है। अतः यदि किसी व्यक्ति अथवा संस्था ने प्रतिभूति के विना किसी अन्य से ऋण के रूप में धन प्राप्त किया है, तो इस जोखिम के बदले में उसके लिए प्रतिफल चुकाने का दायित्व निश्चित हो सकता है। अतः उत्पादन में से एक आनुपातिक अंश लाभ के रूप में प्रदान किया जा सकता है। किन्तु हानि के लिए उस ऋणदाता को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि वह निवेशक या विनियोजक के रूप में उद्यम में समाहित नहीं हो रहा है, बल्कि धन का जोखिम उठाते हुए अप्रातिभूतिक ऋण देकर वह तटस्थ हो गया है। हानि होने पर उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होगा, किन्तु लाभ होने पर उसे आनुपातिक अंश दिया जाएगा। इसे ही ऋण पर लाभ की प्रशस्तता कहते हैं। जबकि व्याज एक खतरनाक प्रक्रिया है, जिसमें उद्यम के लाभ–हानि पर विचार नहीं किया जाता, बल्कि एक पूर्वनिर्धारित विशेष प्रतिशत के रूप में सदैव एक विशेष धनराशि वसूल की जाती है। इससे ऋणग्राही की दुर्दशा होने की संभावना बनी रहती है, क्योंकि उद्यम में कोई लाभ नहीं होने अथवा हानि होने पर भी उसे व्याज चुकाने की बाध्यता होती है। अतः मुद्रा पर व्याज की प्रथा सदैव अन्यायकारी है। जोखिमरहित व्याजखोरी सम्पूर्ण*

मानवता के प्रति अपराध है। इस मौद्रिक व्याजखोरी को कभी सभ्य मानवीय समाज का अंग नहीं बनाया जा सकता, क्योंकि व्याजखोरी के लिए पूँजी को दुर्लभ बनाने का कुत्सित प्रयास कूटनीति के रूप में स्थान ग्रहण कर लेता है, ताकि लोग व्याजयुक्त ऋण लेने के लिए विवश हों और व्याजखोरों को श्रमहीन आय का शाश्वत अवसर प्राप्त होता रहे। इसीलिए व्याज का निषेध आवश्यक है। मौद्रिक व्याज को सदैव निषिद्ध जानना चाहिए, क्योंकि व्याजखोरी समस्त मौद्रिक संकटों एवं समस्याओं की मूल है। अतः इसे राष्ट्रीय तल पर दण्डनीय अपराध घोषित किया जाना चाहिए।

व्याज और लाभ में भेद (Difference between Interest and Profit) :– मुद्रा पर व्याज और लाभ में निम्नलिखित भेद हैं :–

1) प्रायः 'व्याज' एक विशेष प्रतिशत पर आधारित होता है, जबकि 'लाभ' की गणना कुल विनियोजित पूँजी के आनुपातिक अंश पर आधारित होती है।
2) 'व्याज' पूर्वनिर्धारित होता है, जबकि 'लाभ' अनिर्धारित होता है।
3) 'व्याज' का भुगतान एक निश्चित समय पर अनिवार्य होता है, किन्तु 'लाभ' का भुगतान केवल तभी संभव होता है, जबकि उद्यम में 'लाभ' उत्पन्न हो।
4) मौद्रिक 'व्याज' आर्थिक विकास के लिए हानिकारक है, किन्तु 'लाभ' की नीति समाज या राष्ट्र के आर्थिक विकास में सहायक है।
5) मौद्रिक 'व्याज' की नीति विनियोग एवं उद्यमों की स्थापना को हतोत्साहित करती है, जबकि लाभ की नीति विनियोग एवं उद्यमों की स्थापना को प्रोत्साहित करती है।
6) मौद्रिक 'व्याजप्रथा' अदूरदर्शी है, किन्तु 'लाभप्रथा' को दूरदर्शी विवेकशीलता का प्रतिफलन कहा जा सकता है।

ऋण और निवेश में भेद (Difference between Loan and Investment) :– मौद्रिक ऋण और निवेश में निम्नलिखित भेद हैं :–

1) किसी प्रतिफल की आशा में दिया जानेवाला उधार ही 'ऋण' है। जबकि किसी उद्यम की स्थापना के लिए किया जानेवाला विनियोग ही 'निवेश' है।
2) 'ऋणदाता' को उद्यम पर स्वामित्व प्राप्त नहीं होता, किन्तु 'निवेशकर्ता' को उद्यम पर श्रम एवं सुविधा के अनुपात में तृतीयांश स्वामित्व प्राप्त होता है।
3) 'ऋण' पर न्यायपूर्वक केवल लाभ प्रशस्त होता है, जबकि 'निवेश' पर उद्यम के लाभ एवं हानि दोनों का प्रभाव पड़ता है।
4) 'ऋणदाता' को उद्यम पर होनेवाली हानि के दायित्व भार नहीं वहन करना पड़ता, जबकि निवेशक को उद्यम की हानि का दायित्व वहन करना पड़ता है।
5) 'ऋणदाता' किसी भी उद्यम का स्वामी नहीं होता, अतः उद्यम के संचालन हेतु वह उत्तरदायी नहीं होता। जबकि 'निवेशक' को उद्यम का स्वामी होने के कारण उद्यम के संचालन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ती है।

6) *'ऋण' और 'निवेश' दोनों ही अप्रातिभूतिक होते हैं, किन्तु दोनों के स्वभाव में परस्पर भेद होता है।*

7) *'ऋण' और 'निवेश' दोनों ही तरलीकरण से भिन्न हैं, क्योंकि तरलीकरण प्रातिभूतिक होता है। किन्तु ऋण को माध्यस्थिक अप्रातिभूतिक तरलीकरण (Intermediary Unsecured Liquidization) जैसा कहा जा सकता है। जबकि निवेश को तरलीकरण के रूप में परिभाषित नहीं किया जा सकता।*

ऋण और उधार में भेद (Difference between Loan and Borrowing) *:– मौद्रिक ऋण और उधार में निम्नलिखित भेद हैं :–*

1) *ऋण किसी प्रतिफल की प्राप्ति के लिए दिया जाता है। जबकि उधार में प्रतिफल का उद्देश्य समाहित नहीं होता।*

2) *ऋणदाता किसी उद्यम के लाभ में हिस्सेदार हो सकता है, जबकि उधारदाता किसी उद्यम के लाभ में हिस्सेदार नहीं हो सकता।*

3) *ऋण व्यावसायिक उद्देश्य से दिया जाता है, जबकि उधार सौहार्दवश दिया जाता है।*

4) *ऋणवसूली में विलम्ब होने पर ऋणदाता द्वारा दण्ड की शर्त लगायी जा सकती है, जबकि उधार सौहार्दपूर्ण होने के कारण प्रायः उधार वापसी में विलम्ब होने पर दण्ड की शर्त नहीं लगायी जाती।*

तरलीकरण और निवेश में भेद (Difference between Liquidization and Investment) *:– तरलीकरण और निवेश में निम्नलिखित भेद हैं :–*

1) *तरलीकरण किसी स्थूल या ठोस सम्पत्ति को प्रतिस्थापित करता है, जबकि निवेश किसी उद्यम के संस्थापन एवं संचालन हेतु किया जाता है।*

2) *तरलीकरण के लिए बाजारमूल्य धारण करनेवाली किसी स्थूल या ठोस सम्पत्ति को होना आवश्यक है, जबकि निवेश के लिए इसका होना आवश्यक नहीं है।*

3) *तरलीकरण द्वारा प्राप्त राशि का उपयोग करने के लिए प्राप्तकर्ता स्वतन्त्र है, जबकि निवेश के रूप में प्राप्त धनराशि का उपयोग केवल तत्सम्बन्धी उद्यमविशेष में ही किया जा सकता है।*

4) *तरलीकरण के लिए किसी उद्यम का होना अनिवार्य नहीं है, जबकि निवेश के लिए किसी उद्यम का होना अनिवार्य है।*

5) *तरलीकरण के माध्यम से किसी उद्यम की स्थापना होने पर तरलीकरणकर्ता का स्वामित्व उस उद्यम पर नहीं होता, जबकि निवेशक तत्सम्बन्धी उद्यम पर आनुपातिक तृतीयांश स्वामित्व धारण करता है।*

6) *तरलीकरणकर्ता केवल उस सम्पत्ति पर धनवसूली पूर्ण होने के समय तक अप्रत्यक्ष स्वामित्व धारण कर सकता है, जबकि निवेशक तत्सम्बन्धी उद्यम पर प्रत्यक्ष स्वामित्व धारण करता है।*

7) *तरलीकरणकर्ता किसी उद्यम के लाभ–हानि से कोई सम्बन्ध नहीं रखता, जबकि निवेशकर्ता तत्सम्बन्धी उद्यम के लाभ–हानि पर समुचित हिस्सेदारी धारण करता है।*

ऋण एवं तरलीकरण में भेद (Difference Between Loan & Liquidization) *:– जैसे ऋण एवं निवेश में भेद है, वैसे ही ऋण एवं तरलीकरण में भी निम्नलिखित भेद हैं :–*

1) *किसी प्रतिफल की प्राप्ति के उद्देश्य से दिया जानेवाला उधार ही 'ऋण' है, जबकि सम्पत्तियों के मूल्यों का प्रतिस्थापन ही 'तरलीकरण' है।*

2) *ऋण प्रत्याभूत अथवा अप्रत्याभूत दोनों प्रकार का हो सकता है, जबकि तरलीकरण केवल प्रत्याभूत होता है। स्थूल सम्पत्ति के विना तरलीकरण संभव नहीं होता।*

3) *ऋणदाता उद्यम पर दिए जानेवाले ऋण के अनुपात में उद्यम पर स्वामित्व धारण कर सकता है, जबकि तरलीकरण संस्थान केवल प्रतिभूति पर ही स्वामित्व धारण करता है।*

4) *ऋणदाता अपने द्वारा प्रदत्त ऋणराशि की मात्रा के अनुपात में सम्बन्धित उद्यमादि पर होनेवाले लाभ या शुल्क की माँग कर सकता है, जबकि तरलीकरण संस्थान अपने सम्बद्ध उद्यमादि से कोई लाभ प्राप्ति का अधिकार नहीं रखता।*

5) *ऋण पर शुल्क अथवा लाभ प्राप्ति की नीति का अधिकार ऋणदाता के लिए प्रतिपादित हो सकता है, यदि ऋण के लिए कोई प्रतिभूति के रूप में प्रत्यक्ष सम्पत्ति की माँग न की गई हो, जबकि प्रातिभूतिक तरलीकरण के लिए 'ऋण' शब्द के उपयोग की कोई सार्थकता नहीं रह जाती। तरलीकृत राशि किसी भी उद्यम में विनियोजित होने पर तरलीकरण संस्थान का उस उद्यम के लाभ–हानि से कोई सम्बन्ध नहीं होता।*

6) *ऋणसेवा भी एक प्रकार का तरलीकरण है, यदि वह प्रतिभूति के बदले प्रदान की गयी हो, जबकि तरलीकरण भी एक प्रकार की ऋणसेवा ही है, यदि वह प्रतिभूति के बदले में जारी न की गई हो।*

7) *ऋणसेवा सरकारी अथवा गैरसरकारी सत्ताओं, बैंकों, कम्पनियों आदि किसी भी संस्थान द्वारा संचालित करी जा सकती है, जबकि तरलीकरण सेवा केवल सरकारी संस्थान या राजकीय अधिकोष के द्वारा ही संचालित किया जाना न्यायोचित है।*

8) *ऋणेसवा को एकप्रकार का विनियोग भी कहा जा सकता है, जबकि तरलीकरण को विनियोग के रूप में परिभाषित करना न्यायोचित नहीं सिद्ध होता।*

9) *ऋणसेवा में शुल्कवसूली अथवा लाभ में हिस्सेदारी का समावेश हो सकता है, किन्तु मौद्रिक ऋण पर भी व्याज या टैक्स आदि अपराध है, जबकि तरलीकरण सेवा पूर्णतः निःशुल्क एवं लाभ–हानि, टैक्स, व्याज आदि के भार से मुक्त होनी चाहिए।*

10) *मौद्रिक ऋणसेवा को मुद्राप्रचालन की प्रक्रिया कहा जा सकता है, जबकि मौद्रिक तरलीकरण को मुद्रानिगमन की प्रक्रिया कहा जा सकता है।*

11) *ऋण पर व्याज के स्थान पर ऋण को विनियोग की भाँति मानकर उद्यमादि के लाभ में ऋणदाता को ऋण के अनुपात में समाहित किया जाना चाहिए, जबकि तरलीकरण प्रणाली मुद्रा पर व्याज की दूषित प्रथा को पूर्णतः समाप्त कर सकती है।*

12) *ऋण और निवेश में भी भेद है, किन्तु ऋण केवल लाभ को स्वीकार करता है, निवेश लाभ और हानि दोनों को स्वीकार करता है, जबकि तरलीकरण और निवेश में भेद है। तरलीकरण का किसी उद्यम के लाभ–हानि से कोई सम्बन्ध नहीं है, जबकि निवेश का उद्यम के लाभ–हानि से सम्बन्ध है।*

❁❁❁

वारम्वार पूछे जानेवाले प्रश्न
(Frequently Asked Questions)

प्रश्न-01 : मुद्रा पर व्याज क्यों नहीं लगना चाहिए? यह जो विगत सैकड़ों वर्षों से व्याज की प्रथा चल रही है, क्या यह गलत है?

उत्तर-01 : *अर्थशास्त्र की दृष्टि से 'मुद्रा' एक काल्पनिक धन है। उसे वास्तविक धन नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसमें स्वयं कोई उत्पादकता नहीं होती। वह संसाधनों का विकल्पमात्र है। किसी भी वस्तु अथवा सेवा का मूल्यांकन, प्रतिस्थापन अथवा विनिमयन के लिए मुद्रा एक माध यम का काम करती है। अतः मुद्रा को माध्यम के रूप में ही जाना जा सकता है। यह कोई वास्तविक तत्त्व नहीं है। मुद्रा की काल्पनिक सत्ता होने के कारण इसका कोई प्रतिफल नहीं हो सकता। वास्तविक सत्ता ही प्रतिफलित हो सकती है, जैसे– एक आम का पेड़ स्वयं फलता है, किन्तु कल्पना अथवा मान्यता कभी स्वयं प्रतिफलित नहीं हो सकती। किसी अन्य के द्वारा परिश्रमपूर्वक उसका उपयोग किया जा सकता है। अतः परिश्रम ही प्रतिफलन का मूल कारण है। किसी भी रूप में धनोपार्जन के लिए परिश्रम की आवश्यकता होती है। एक मूल्यहीन पत्थर के टुकड़े को परिश्रमपूर्वक सुन्दर मूर्ति में परिवर्तित करके उसे मूल्यवान बनाया जा सकता है। स्पष्ट है कि मूर्ति की मूल्यवत्ता का प्रतिफलन केवल परिश्रम से ही सिद्ध हो सकता है। अतः मूल्यहीन पत्थर से मूल्यवान मूर्ति तक की यात्रा परिश्रम द्वारा संभव होने की प्रक्रिया प्रमाणित करती है कि यह मूर्ति यदि 200 रुपये में बिक्रीत हो सकती है, तो यह 200 रुपये का ध नोपार्जन उस परिश्रम का ही प्रतिफलन है। इस तथ्य से स्पष्ट है कि जहाँ कहीं भी कोई ध नोपार्जन है, वह किसी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष परिश्रम का ही प्रतिफल है। इसलिए मुद्रा पर व्याज प्राप्त करनेवाला व्यक्ति किसी न किसी व्यक्ति के परिश्रम का फल ही उसके खाते से खींचकर अपने खाते में जमा कर रहा है, क्योंकि परिश्रम के विना कोई भी धन उत्पन्न नहीं हो सकता। मुद्रा की काल्पनिक सत्ता को वास्तविक रूप देने के लिए परिश्रम की आवश्यकता होती है। मुद्रा किसी गाय की भाँति वास्तविक न होने के कारण व्याती नहीं है, अतः उससे व्याज उत्पन्न होने का प्रश्न नहीं उठता। काल्पनिक वस्तु को प्रतिफलित करने के लिए परिश्रम अनिवार्य है। अतः श्रमहीन व्याज प्राप्ति की आकांक्षा अनैतिक है, अन्यायकारी है। यह दूसरों के परिश्रम को खींचने का षड़यन्त्रमात्र है।*

स्पष्ट है कि मुद्रा पर व्याज की प्रथा शोषण का प्रतीक है और यह जो हजारों वर्षों से मौद्रिक व्याजप्रथा चल रही है, वह निश्चित रूप से गलत है, दूषित है। दुर्वृत्त व्यक्तियों द्वारा ही इस व्याजप्रथा का संचालन किया जा रहा है, जिसके द्वारा परिश्रम किए विना फल प्राप्ति की दुष्कामनाओं की पूर्ति की जा रही है। कर्म किए विना फल की आकांक्षा ही अपराध को जन्म देती है। दुराचार के रूप में यह महापातक है, तथा दुर्व्यवहार के रूप में यह महा अपराध है। इसलिए यह मौद्रिक व्याजप्रथा किसी सभ्य समाज में प्रतिष्ठित नहीं हो सकती। अनेक सामाजिक धार्मिक आन्दोलनों ने समय-समय पर इसका विरोध किया है, तथा इसे हटाने या समाप्त करने का प्रयास भी किया है।

प्रश्न-02 : व्याज, टैक्स, शुल्क हटने से क्या वास्तव में मुद्रा निर्भार हो जाएगी? और इस निर्भारता से इसके चलनवेग में क्या वास्तव में वृद्धि हो जाएगी?

उत्तर-02 : *वर्तमान समाज एवं राष्ट्र में मुद्रा पर ये तीन ही प्रकार के भार चढ़े हुए हैं– व्याज, टैक्स, शुल्क। इन तीनों भारों के समाप्त होते ही निश्चित रूप से मुद्रा निर्भार हो जाएगी। मुद्रा के पैरों में व्याज की बेड़ी एवं हाथों में टैक्स की हथकड़ी है। टैक्स को ही 'कर' कहते हैं। हाथ को भी 'कर' कहते हैं। अतः टैक्स को मनुष्यों के हाथ की ऐसी हथकड़ी कहा जा सकता है, जो उसे किसी भी कार्य को करने में असमर्थ बना देती है। बेड़ियों और हथकड़ियों के रूप में इन दोनों भयंकर बंधनों में बाँधकर मुद्रा को शुल्क के हंटर से मारते हुए चलाने की चेष्टा करी जा रही है। ऐसी भयंकर दशा में मुद्रा की चलनगति कितनी तीव्र और फलदायक होगी, इसका अनुमान किसी प्रबुद्ध व्यक्ति को सहज ही हो सकता है। भयंकर भार से दबी हुई मुद्रा की चलनगति ध ीमी पड़ जाती है। मुद्रा की चलनगति धीमी पड़ने से पाँचों आर्थिक क्रियाएँ धीमी पड़ जाती हैं, जिससे आर्थिक विकास का रथचक्र रुकने लगता है। इस रथचक्र के रुकने से संसार की जीवनयात्रा न सुखद रह जाती है, न सफल। जीवनयात्रा की असफलता से जीवन का लक्ष्य कभी प्राप्त नहीं हो सकता। लक्ष्य तक पहुँचने के लिए यात्रा का गतिमान होना आवश्यक है। स्पष्ट है कि मुद्रा को निर्भार बनाए विना मुद्रा का चलनवेग सद्गति को प्राप्त नहीं हो सकता। धीमा या कुंठित चलनवेग किसी भी समाज या राष्ट्र के आर्थिक विकास, प्रगति एवं समृद्धि की संभावनाओं को साकार नहीं कर सकता। इसलिए व्याज, टैक्स, शुल्क आदि के रूप में मुद्रा पर लदे हुए तीनों भार हटाकर ही मुद्रा के चलनवेग को स्वस्थ बनाया जा सकता है। मुद्रा के चलनवेग की वृद्धि करनेवाला यह सबसे महत्त्वपूर्ण उपाय है।*

प्रश्न-03 : क्या व्याजखोरी वास्तव में पाप या अपराध है?

उत्तर-03 : *चारित्रिक दोष ही पाप है, व्यावहारिक दोष ही अपराध है। पाप से मनुष्य के निजी गुणों का नाश होता है, अपराध से मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों का नाश होता है। मनुष्य की संस्कृति और सभ्यता दोनों पर व्याजखोरी का प्रभाव पड़ता है। आचार की प्रक्रिया ही 'संस्कृति' है, व्यवहार की प्रक्रिया ही 'सभ्यता' है। संस्कृति से प्रकृति का निर्माण होता है। सभ्यता से संविधान का निर्माण होता है। व्यक्तित्व पर संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है, व्यवस्था का सभ्यता स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। व्याजखोरी प्रथा इन दोनों को प्रभावित करती है। एक ओर यह मनुष्य को श्रमहीन उपभोग सुलभ कराती है, जिससे मनुष्यों में अकर्मण्यता बढ़ती है। अकर्मण्यता से मनुष्यों में मूर्खता, जड़ता एवं तामसिकता की वृद्धि होती है। दूसरी ओर यह व्याजप्रथा मनुष्यों के व्यवहार को दूषित करके पारस्परिक सम्बन्धों को नष्ट करती है, जिससे सभ्यता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। मनुष्य स्वार्थी एवं परद्रोही होने लगते हैं, पंचदोषों से घिरकर विनाश की ओर चल पड़ते हैं। मानवता, सामाजिकता, राष्ट्रीयता केवल पारस्परिक सम्बन्धों के सकारात्मक स्वरूप से उत्पन्न हुई सभ्यता के प्रतिफलन हैं। व्याजप्रथा इन पारस्परिक सम्बन्धों को नष्ट करती है, जिससे मनुष्य दूसरों का शोषक बनकर उनके परिश्रम को खींचकर दुर्भोग की प्रवृत्तिवाला हो जाता है। यह दुष्प्रवृत्ति उसे दुष्ट बना देती है। दुष्टता ही अपराध की प्रेरक है।*

स्पष्ट है कि यह व्याजप्रथा आचारिक दृष्टि से पाप है, तथा व्यावहारिक दृष्टि से अपराध है, क्योंकि यह मनुष्यों के चारित्रिक गुणों एवं व्यावहारिक सम्बन्धों को एक साथ प्रभावित करती है। यह भयंकर पाप और अपराध के रूप में चलनेवाली व्याजप्रथा मानवीय संस्कृति एवं सभ्यता दोनों के लिए समान रूप से हानिकारक है।

प्रश्न-04 : व्याज तो सभी बैंकों, कम्पनियों, वित्तीय संस्थाओं एवं सरकारों द्वारा भी लिया जा रहा है, तो क्या ये सब पापी और अपराधी हैं?

उत्तर-04 : *निश्चित रूप से कोई भी व्यक्ति चाहे वह जानबूझकर पाप या अपराध करे, चाहे अनजाने में करे, कर्म तो जैसा है वैसा ही प्रतिफलित होगा। यदि कर्म गलत है, तो गलत फल उत्पन्न करेगा। यदि कर्म सही है, तो सही फल उत्पन्न करेगा। 'जैसा कर्म वैसा फल' ही इस संसार का सिद्धान्त है। इस कर्मसिद्धान्त को संसार के सभी प्राणी जानते हैं कि दुष्कर्म के फल दुःखद होते हैं और सत्कर्म के फल सुखद होते हैं। व्याजखोरी को कभी किसी महापुरुष ने सही नहीं ठहराया। विशेष रूप से अर्थशास्त्र के ज्ञाता भलीभाँति जानते हैं कि मुद्रा काल्पनिक वस्तु है और कल्पना पर व्याज कभी वास्तविक या सत्य नहीं हो सकता। सत्य के विरुद्ध आचार-व्यवहार से ही दोष उत्पन्न होते हैं। सदाचार एवं सद्व्यवहार को ही आदरणीय कहा जा सकता है। दुराचार एवं दुर्व्यवहार को कभी आदर्श नहीं माना जा सकता। किसी सभ्य समाज अथवा सभ्य राष्ट्र का आदर्श कभी दुराचार और दुर्व्यवहार नहीं हो सकता। इसलिए चाहे वह व्यक्ति हो, संस्था हो, सरकार हो, यदि वह व्याजखोरी के दुराचार और दुर्व्यवहार में लिप्त है, तो निश्चित रूप से वह पापी और अपराधी है। इस पाप और अपराध के परिणाम भी सही नहीं हो सकते। इसके दुष्परिणाम से ही हमारे समाज या राष्ट्र की दुर्गति एवं दुर्दशा प्रकट होती है।*

प्रश्न-05 : सरकार द्वारा मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि की वसूली को न्यायसंगत क्यों नहीं माना जा सकता?

उत्तर-05 : *मुद्रा का निगमन एवं प्रचालन सरकार द्वारा जनहित में संचालित की जानेवाली सार्वजनिक सेवाओं में एक महत्त्वपूर्ण सेवा है। सरकारी अधिकोष या बैंक के माध्यम से इस जनसेवा का संचालन राज्य की ओर से प्रजापालन सम्बन्धी एक कर्तव्य है। जैसे न्यायशील विद्यालय के द्वारा लोगों में गुणों एवं कौशलों का विकास होता है, वैसे ही न्यायशील मुद्रालय के द्वारा लोगों के धनों और सम्पदाओं का विकास होता है। विद्यालय की भाँति ही मुद्रालय महत्त्वपूर्ण है। सरकारी मुद्रालय को ही अधिकोष या बैंक कहते हैं। मुद्रा मौलिक रूप से संसाधनों का विकल्प है। संसाधनों को आयस्रोत कहा जाता है। संसाधन को आय नहीं माना जा सकता। संसाधन के द्वारा जो उत्पादन है, उस पर अवश्य टैक्स आदि राजस्व की प्राप्ति का अधिकार सरकार के लिए न्यायसंगत हो सकता है। किन्तु संसाधन पर व्याज, टैक्स या शुल्क लगाए जाने से संसाधनों की क्षीणता एवं दुर्लभता उत्पन्न होती है। कृषिभूमि पर लगान, राजस्व, टैक्स आदि आरोपित करने से कृषिभूमि का क्षरण एवं हरण प्रारम्भ हो जाता है। किन्तु कृषिभूमि पर होनेवाले उत्पादनों पर न्यायसंगत तृतीयांश राजस्व का निर्धारण करना सम्वैधानिक ठहराया जा सकता है। किसी भी उत्पादन पर लागत काटकर शुद्ध लाभ पर उत्पादन के तीनों साधनों का समान स्वामित्व घोषित करके न्यायपूर्वक तीन भाग में शुद्ध लाभ का वितरण किया जा सकता है। ऐसे ही वाणिज्यिक एवं अन्य उद्यमों पर भी श्रमिक, पूँजीपति, सरकार के स्वामित्व की त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था न्यायपूर्वक प्रतिष्ठित हो सकती है। किन्तु व्याज की नीति तो किंचित भी नैतिक सिद्ध नहीं होती, क्योंकि यह दूसरों के श्रम का प्रत्यक्ष शोषण है। इसीप्रकार से सरकारी मौद्रिक संस्थान द्वारा मौद्रिक सेवाओं के लिए शुल्क की वसूली के आधार पर मुद्रा का निगमन या प्रचालन कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता, क्योंकि सरकार द्वारा जनसेवाओं के संचालन हेतु एक राजकोष का निर्माण उत्पादन पर तृतीयांश राजस्व एवं कर के माध्यम से किया जाता है। यह राजकोष ही सार्वजनिक सेवाओं पर व्यय किया जाता है। अतः भिन्न रूप में मुद्रा पर किसी भी प्रकार का सरकारी शुल्क कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता।*

प्रश्न-06 : कोई भी संस्था किसी अन्य व्यक्ति अथवा संस्था को बिना ब्याज का ऋण क्यों प्रदान करेगी?

उत्तर-06 : *मुद्रा पर ब्याज अन्याय है। मुद्रा एक सरकारी ख्याति अथवा वचन पर निगमित एवं प्रचालित होनेवाली सत्ता है, जो वास्तविक न होकर काल्पनिक अस्तित्व वाली सम्पत्ति है। यह वास्तव में संसाधनों का विकल्प मात्र है। स्वयं इसका कोई वस्तुगत मूल्य सिद्ध होना आवश्यक नहीं है। यह तो स्वयं दूसरी वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यांकन का कार्य करती है। मुद्रा किसी भी क्रय-बिक्रय अथवा आर्थिक लेन-देन का माध्यम मात्र है। यह माध्यम जितना निर्भार होगा, उतना तीव्र गति से चलेगा। इसकी गति की तीव्रता ही आर्थिक गतिविधियों को तीव्र बनाती है, जिससे आर्थिक विकास संभव होता है। मुद्रा पर ब्याज आदि के भार कभी नैतिक अथवा न्यायसंगत नहीं हो सकते। अतः किसी भी व्यक्ति अथवा संस्थान को मुद्रा पर ब्याज लेने का कोई अधिकार नहीं बनता। मुद्रा यदि किसी भी उद्यम में उधार या ऋण या निवेश की भूमिका निभाती हो, तो उस उद्यम में उत्पन्न होनेवाले लाभ पर उसका समानुपातिक हिताधिकार सिद्ध हो सकता है। जबकि मुद्रा पर ब्याज की नीति उस उद्यम के लाभ-हानि से असम्बद्ध रहते हुए अपने लिए पूर्वनिर्धारित प्रतिशत पर किसी धनराशि विशेष की माँग करती है, चाहे उद्यम में कोई लाभ न हो रहा हो, अथवा वह उद्यम लगातार हानि ही उठा रहा हो। इससे सिद्ध होता है कि मुद्रा पर ब्याज की नीति वास्तव में मौलिक संसाधनों के शोषण का कार्य करती है, जिससे उत्पादन के साधन क्षीण होने लगते हैं, आयस्रोत नष्ट होने लगते हैं और राष्ट्र के सकल उत्पाद पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, जिससे राष्ट्रीय आर्थिक विकास कुंठित होने लगता है। अतः किसी भी व्यक्ति अथवा संस्थान को एक पूर्वनिर्धारित प्रतिशत के रूप में ब्याज की माँग करना शोभा नहीं देता। कोई भी व्यक्ति, सत्ता या संस्थान चाहे वह सरकारी हो अथवा गैरसरकारी, यदि वह किसी पूर्वनिर्धारित ब्याज की माँग करता है, तो उसे न्यायविरुद्ध एवं असम्वैधानिक घोषित करने के साथ-साथ उसे असामाजिक एवं अमानवीय भी ठहराया जाना चाहिए। यद्यपि इस ऋणसेवा के संचालनार्थ किसी गैरसरकारी संस्थान द्वारा कोई शुल्क विशेष अवश्य प्राप्त किया जा सकता है, तथापि सरकारी संस्थान को संचालित करने के लिए राजकोष द्वारा संचालनव्यय वहन किया जाना चाहिए। अतः सरकारी ऋणसेवा तो सदैव निर्व्याज एवं निःशुल्क रूप से ही संचालित होना चाहिए, तथा इस पर किसी भी प्रकार का सरकारी टैक्स भी लगाना न्यायोचित नहीं ठहराया जाना चाहिए।*

प्रश्न-07 : सरकार द्वारा मुद्रा पर ब्याज, टैक्स या शुल्क क्यों नहीं लगाया जाना चाहिए, जबकि सरकार द्वारा ब्याज, टैक्स या शुल्क के रूप में अर्जित किया गया धन जनसेवा पर ही व्यय किया जाता है?

उत्तर-07 : *सरकार द्वारा संसाधन नहीं, केवल उत्पादन पर ही राजस्व या टैक्स लगाया जा सकता है। यही न्याय का प्रतिपादन है। संसाधन का प्रयोग पूँजी की भाँति होता है। उसे उत्पादन की भाँति उपभोग्य वस्तु नहीं माना जा सकता। यदि ब्याज, टैक्स, शुल्क का आरोपण संसाधनों पर किया गया, तो यह सम्पूर्ण राष्ट्र के आर्थिक विकास को कुंठित करनेवाला सिद्ध होता है। भारयुक्त मुद्रा की चलनगति कभी तीव्र नहीं हो सकती। भारयुक्त मुद्रा कभी सहजरूप से सर्वसुलभ नहीं हो सकती। मुद्रा के प्रवाह में गतिरोध एवं मुद्रा की दुर्लभता कभी किसी समाज या राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को विकास के पथ पर नहीं चला सकती। राष्ट्रीय आर्थिक विकास को संभव बनाने के लिए मौद्रिक गतिरोध एवं उसकी दुर्लभता को समाप्त करने का*

नैतिक प्रयत्न आवश्यक होता है। इसके लिए मुद्रा पर व्याज, टैक्स एवं शुल्क का समापन ही एकमात्र न्यायसंगत उपाय है। अन्य किसी भी उपाय से राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। आर्थिक विकास के विना समाज एवं राष्ट्र में बेरोजगारी, गरीबी, भुखमरी एवं पिछड़ेपन का भयंकर वातावरण उत्पन्न होता है। आयस्रोतों अथवा संसाधनों को नष्ट करके सरकार कभी नागरिकों का भला नहीं कर सकती। संसाधनों से आय का उत्पादन ही समाज के लिए हितकारी है। संसाधनों का उपभोग करके तो भविष्य में सुनिश्चित भुखमरी और दरिद्रता का दुःख झेलना पड़ेगा। संसाधनों को आयस्रोत के रूप में बनाए रखना आवश्यक है। व्याज, टैक्स, शुल्क का आरोपण संसाधनों पर न करके संसाधनों के द्वारा किए जानेवाले उत्पादनों पर न्यायोचित रूप से किया जा सकता है। व्याज, टैक्स, शुल्क को संसाधन पर लगाने की नीति का त्याग सरकार द्वारा तुरन्त किया जाना चाहिए। केन्द्रीय मौद्रिक संस्थान की ओर से मुद्रा समस्त संसाधनों के वैकल्पिक रूप में जारी की जाती है, अतः उस पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स, शुल्क सरकार द्वारा लगाया जाना कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता। चाहे उसके द्वारा व्याज, टैक्स, शुल्क के रूप में प्राप्त किए गए धन का उपयोग सार्वजनिक हित में ही किया जा रहा हो, तो भी वह सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए सदैव हानिकारक सिद्ध होगा। जैसे कोई दुकानदान अपनी दुकान की पूँजी का उपयोग या उपभोग अपने लिए अथवा अपने घर के सदस्यों के लिए करे, तो उसकी दुकान का डूबना निश्चित है।

प्रश्न-08 : लाभ और व्याज की नीति में भेद क्यों है? यदि किसी उद्यम पर ऋण से लाभ प्राप्त किया जा सकता है, तो व्याज क्यों नहीं?

उत्तर-08 : *किसी प्रतिफल की प्राप्ति के उद्देश्य से दिया जानेवाला उधार ही ऋण है। ऋण यदि किसी उत्पादक कार्य के लिए प्राप्त किया जाए, तो वह उस उद्यम में ऐसे निवेश की भाँति होना चाहिए, जो केवल लाभ में हिस्सेदारी को स्वीकार करता है। किन्तु उस ऋण पर यदि व्याज की दुर्नीति अपनाई जाती है, तो उस उद्यम को लाभ न होने पर भी वह ऋणदाता प्रतिफल पाने की आशा रखता है, जिससे उद्यम के संसाधनों को क्षति पहुँचती है। अतः व्याजरूपी प्रतिफल किसी उद्यम में लाभ न होने पर अथवा हानि होने की दशा में भी उस उद्यम से अपने प्रतिफल की अनैतिक माँग करता है, जिससे उद्यम के मौलिक संसाधनों को क्षति पहुँचती है और उद्यम में उत्पादन के साधनों की क्षति होने पर उद्यम गतिशील नहीं रह पाता और उसका कारोबार बन्द होने की ओर अग्रसर हो जाता है। इसलिए व्याज को आर्थिक विकास की यात्रा के लिए स्पष्ट रूप से हानिकारक देखा जा सकता है। अतः* ***'ऋण पर लाभ की नीति'*** *स्वीकार हो सकती है, किन्तु* ***'ऋण पर व्याज की नीति'*** *कभी स्वीकार्य नहीं हो सकती। किसी सभ्य समाज अथवा सभ्य राष्ट्र में मौद्रिक ऋण पर व्याज की नीति को कभी न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता। अतः उसे सम्वैधानिक स्थान प्राप्त नहीं हो सकता।*

प्रश्न-09 : क्या मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का भार प्रजा को दास बनाने का षड्यन्त्र है?

उत्तर-09 : *राज्य की ओर से मुद्रा का निगमन एवं प्रचालन एक पवित्र जनसेवा है। संस्कृत भाषा में जनता को ही 'राष्ट्र' शब्द से सम्बोधित किया जाता है। जनता की सेवा ही राष्ट्र की सेवा है। राज्य दो प्रकार का हो सकता है– सुराज्य और कुराज्य। सुराज्य को परिभाषित करते हुए प्राचीन भारतीय नीतिशास्त्र कहता है–* ***'न्यायमूलं सुराज्यं स्यात्।'*** *अर्थात् 'न्याय ही सुराज्य का मूल आधार है।' न्याय के विना कोई भी राज्य कभी सुराज्य सिद्ध नहीं हो सकता। मुद्रा*

जैसे वैकल्पिक संसाधन पर राज्य की ओर से व्याज, टैक्स, शुल्क आदि को कभी न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता। किसी भी संसाधन को उत्पादन के लिए आयस्रोत के रूप में देखा जाता है। उत्पादन ही आय कहलाती है। उत्पादन में लागत एवं लाभ का समावेश होता है। लागत घटाकर जो शुद्ध उत्पादन बचता है, उसे 'लाभ' कहते हैं और इस लाभ का वितरण उत्पादन के तीनों साधनों के स्वामियों के बीच समान रूप से किया जाना ही न्यायसंगत सिद्ध हो सकता है। किन्तु यदि उत्पादन के लिए आवश्यक संसाधनों का ही उपभोग प्रारम्भ कर दिया जाए, तो धीरे–धीरे उत्पादन की संभावनाएँ समाप्त हो जाएँगी और संसाधन की क्षीणता से चारों ओर बेरोजगारी, गरीबी एवं भुखमरी का वातावरण उत्पन्न हो जाएगा। किसी भी राष्ट्र के नागरिक जब अपने जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं से वंचित होकर बेरोजगारी, गरीबी एवं भुखमरी से ग्रस्त हो जाते हैं, जो वह किसी भी सेठ अथवा राज्य के दास बनने को विवश हो जाते हैं। जो भी उनको रोजी, रोटी, कपड़ा आदि की भीख या खैरात देने की लालच देता है, वह उसके पीछे 'जिन्दाबाद–जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए चलने को विवश हो जाते हैं। अतः व्याज, टैक्स, शुल्क आदि के रूप में मुद्रा पर भार चढ़ाकर उसे सामान्य जनों के लिए कठिन एवं दुर्लभ बनाकर उन्हें संसाधनविहीन करते हुए कोई भी राज्य बड़ी सहजतापूर्वक उन्हें दास बना सकता है। स्थूल हथकड़ियों–बेड़ियों की आवश्यकता तो मूर्ख राजाओं द्वारा अनुभव करी जाती है। धूर्त राजाओं द्वारा तो प्रजा के पैरों में व्याज की बेड़ी और हाथों में टैक्स की हथकड़ी लगाकर शुल्क के हंटरों से मारते हुए प्रजा को अपनी सेवाओं में नियोजित किया जाता है। तब राज्य की ओर से प्रदान की जानेवाली जनसेवा वास्तव में जानलेवा हो जाती है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स एवं शुल्क की नीति कितनी भयंकर है, इसका अनुमान सहज ही प्रबुद्धजनों द्वारा किया सकता है।

प्रश्न-10 : पूँजी से व्याज और व्याज से पूँजी निर्माण का कुचक्र इतना भयंकर क्यों है?

उत्तर-10 : *व्याज को भिक्षा और लूट के समकक्ष माना जा सकता है, जिससे मुफ्तखोरी और कामचोरी को बढ़ावा मिलता है। मुद्रा पर व्याज की प्रथा ही कर्म किए विना फल भोगने की दुर्व्यवस्था को जन्म देती है। पूँजी से व्याज और व्याज से पूँजी बढ़ाते हुए यदि कोई व्यक्ति निरन्तर चलता रहे, तो वह एक दिन सम्पूर्ण पृथ्वी की अर्थव्यवस्था को अपने अधीन कर सकता है, तथा जगत् के सम्पूर्ण संसाधनों एवं सम्पदाओं को अपने अधीन करके सम्पूर्ण संसार को अपना दास बना सकता है। अतः व्याजप्रथा को एक शैतानी कुचक्र कहा जा सकता है। यह एक ऐसी दुर्वृत्ति से उत्पन्न होती है, जो दूसरों के श्रमरक्त को चूसकर उन्हें अस्वस्थ कर डालती है। स्पष्ट है कि मुद्रा पर व्याज की प्रथा सम्पूर्ण सृष्टि के विनाश का कारण बन सकती है। इसकी भयंकरता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। मुद्रा पर व्याज की प्रथा किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को अपने अधीन करके उसका मनमाना दुरुपयोग करने के समस्त अवसर प्रदान कर सकती है। मौद्रिक ऋण देकर उस पर एक प्रतिशत विशेष व्याज के रूप में लगातार धनराशि अर्जित करते हुए पूँजी की वृद्धि करते रहनेवाला अकर्मण्य होते हुए भी धनी बना रह सकता है। कुल उपार्जित व्याज का अधिकांश भाग पूँजी में रूपान्तरित करते हुए इस धनभण्डार को निरन्तर बढ़ाते रहनेवाला पुरुषार्थविहीन मनुष्य दैत्यवृत्ति से ग्रस्त होकर सम्पूर्ण सृष्टि के लिए आर्थिक दासता को जन्म दे सकता है। अतः किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को मुद्रा पर इस व्याज की प्रथा के वृक्ष को जड़ से उखाड़कर सदा–सदा के लिए नष्ट कर देना चाहिए, अन्यथा राष्ट्र का आर्थिक विकास कुंठित होकर आर्थिक विनाश प्रारम्भ हो जाता है।*

प्रश्न-11 : व्याज को अनुपार्जित आय क्यों कहना चाहिए? व्याजखोर लोग भी तो कर्ज देने का परिश्रम करते हैं !

उत्तर-11 : *व्याज के रूप में दूसरों को लूटने के लिए ऋण या कर्ज देने का परिश्रम कभी प्रशंसनीय कर्म नहीं हो सकता। प्रशस्त सत्कर्म ही शुभ होता है। कर्म दो प्रकार का होता है– सत्कर्म और दुष्कर्म। इनमें से सत्कर्म के द्वारा सत्परिणाम उत्पन्न होते हैं, जबकि दुष्कर्म के द्वारा दुष्परिणाम उत्पन्न होते हैं। जिस कर्म से दूसरों का शोषण, हानि, क्षति, दुःख इत्यादि उत्पन्न न हो, बल्कि दूसरों का भी समुचित हित सिद्ध हो, उसे सत्कर्म कहते हैं। इसके विपरीत जिस कर्म से दूसरों का शोषण, हानि, क्षति, दुःख इत्यादि उत्पन्न हो, उसे दुष्कर्म कहते हैं। मुद्रा पर व्याज की प्रथा प्रत्यक्ष रूप से दूसरों के परिश्रम का शोषण है। जिस प्रतिफल के बदले में कोई मूल्य न चुकाया जा रहा हो, उसे ही शोषण कहते हैं। व्याज के रूप में प्राप्त किए जानेवाले प्रतिफल के बदले कोई भी मूल्य नहीं चुकाया जाता है, अतः इसे शोषण कहा जाता है। दूसरों द्वारा परिश्रमपूर्वक उपार्जित धन को व्याज के रूप में खींच करके अपने धन भण्डार को बढ़ाने का प्रयास स्पष्ट रूप से दुष्कर्म की परिभाषा के अन्तर्गत आता है। दुष्कर्म करनेवालों को ही दुष्ट कहा जाता है। दूषित इच्छा ही मनुष्य को दुष्ट बनाती है। दुष्टता कभी न्यायकारी नहीं होती। वह दूसरों को अपने समान अधिकार देने को सहमत नहीं होती। दुष्टता दूसरों के लिए सदैव हानिकारक कर्म करती है। दूसरों का शोषण, दलन, दमन, उत्पीड़न करके वह आनन्द को प्राप्त होती है, तथा कुसम्पन्न होकर दूसरों पर अपना अनैतिक अधिपत्य स्थापित करने के लिए सदैव लालायित रहती है। व्याजखोरों के परिश्रम को दुष्कर्म की श्रेणी में ही रखा जाता है, जो कि दुराचार अथवा दुर्व्यवहार के रूप में होता है। दुराचार के रूप में यह पाप है, तथा दुर्व्यवहार के रूप में यह अपराध है। अतः व्याजखोरी को उपार्जन नहीं, अपहरण की श्रेणी में रखा जा सकता है। यह अपहरण रूपी दुष्कर्म है, जो पाप एवं अपराध को जन्म देता है।*

प्रश्न-12 : मौद्रिक व्याजप्रथा को समाप्त करने के लिए क्या सामाजिक संगठन के रूप में कोई उपाय एवं प्रयास किया जा सकता है?

उत्तर-12 : *राष्ट्रीय तल पर सरकारों द्वारा तथा सामाजिक तल पर संगठनों द्वारा मौद्रिक व्याजप्रथा को समाप्त करने के लिए निश्चित रूप से प्रयास किए जा सकते हैं। यदि सरकारें दुर्जनों के चंगुल में फँस गई हों, तो वे मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि को समाप्त करने के लिए सहज ही तत्पर नहीं होते, क्योंकि दुर्जनों का जीवनयापन दूसरों के श्रमरक्त का उपभोग करके ही संभव होता है। दुर्जनों में दुष्कर्म के कारण तमोगुण की वृद्धि होती है, जिससे वे धीरे–धीरे आलसी एवं अकर्मण्य हो जाते हैं। दुष्प्रकृति में निष्क्रियता होती है। तामसिक प्रकृति उपार्जन के स्थान पर अपहरण का प्रयास करती है। दुर्जनों से भरी हुई दूषित प्रकृतिवाली सरकारें मौद्रिक संसाधन को जनता के शोषण का माध्यम बनाती हैं। संसाधन पर व्याज, टैक्स या शुल्क लगाकर वे अज्ञानवश राष्ट्र के सकल उत्पादन को क्षीण कर डालती हैं, जिससे राष्ट्रीय आर्थिक विकास कुंठित होने लगता है। अधिकांश जनता गरीबी, दरिद्रता, भुखमरी, बेरोजगारी आदि भयंकर आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त होने लगती है। यदि यह क्रम निरन्तर चलता रहे, तो सम्पूर्ण राष्ट्र का नाश हो सकता है। संसाधनों के शोषण से संसाधन क्षीण होने लगते हैं। संसाधनों के विना जनजीवन त्रस्त हो जाता है। मुद्रा सभी संसाधनों का विकल्प होने के कारण समस्त संसाधनों में सबसे महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। दुष्ट प्रवृत्ति के लोग यदि शस्त्रबल से*

जनता का शोषण नहीं कर पाते, तो वे बौद्धिक छल से मौद्रिक दुर्नीति के माध्यम से जनता का शोषण प्रारम्भ कर देते हैं। ये शोषक सरकारी अथवा गैर सरकारी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इन दोनों प्रकार के शोषकों से जनता को मुक्त कराने के लिए राष्ट्रीय अथवा सामाजिक दोनों ही प्रकार के उपाय एवं प्रयास किए जा सकते हैं। सामाजिक संगठन के रूप में हमारी संस्था ***'ध र्म संस्थापक संघ'*** *ने जनता को विद्या, जीविका, सुविधा, संरक्षण आदि सेवाएँ सरलतापूर्वक सुलभ कराने सम्बन्धी कार्ययोजनाओं का क्रियान्वयन करने हेतु कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा–25 के अन्तर्गत* ***'सत्धर्म सेवा संस्थान'*** *की स्थापना करी है, जो संघ की विद्यायोजना, उद्यमयोजना, ग्रामयोजना एवं स्वस्तियोजना को क्रियान्वित करने में संलग्न है। जनता को निःशुल्क विद्यालय के माध्यम से समुचित शिक्षण–प्रशिक्षण एवं निर्व्याज मुद्रालय के माध्यम से समुचित जीविका–संसाधन सुलभ कराने का कार्य कर रहा है। निःशुल्क विद्या एवं निर्व्याज मुद्रा को मानवजीवन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं के रूप में जाना जाता है। विद्या से जीवननिर्माण एवं मुद्रा से जीवननिर्वाह सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है। ये दोनों योजनाएँ वर्तमान में संस्थान द्वारा संचालित हो रही हैं, तथा समाज का कोई भी सदस्य इन दोनों सेवाओं को निःशुल्क विद्या एवं निर्व्याज मुद्रा के रूप में प्राप्त कर सकता है। साथ ही सन् 2016 में ग्रामयोजना एवं सन् 2021 में स्वस्तियोजना का शुभारम्भ भी संस्थान द्वारा किया जाएगा, जिससे कि समाज को उसके चारों मानवाधिकारों एवं चारों जनाधिकारों की सेवाएँ न्यायपूर्वक सुलभ करायी जा सकें। किसी मनुष्य के लिए गुण, धन, सुख, स्वास्थ्य प्राप्ति के चार मानवाधिकार तथा विद्या, जीविका, सुविधा, संरक्षण प्राप्ति के चार जनाधिकार न्यायदृष्टि से प्रशस्त हो सकते हैं। यदि राष्ट्रीय सरकारें अपने उत्तरदायित्व का पालन न करें, तो सामाजिक संगठनों का यह कर्तव्य है कि वे इन चारों मानवाधिकारों एवं चारों जनाधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व स्वीकार करें। किन्तु जो सामाजिक संगठन अथवा राष्ट्रीय सरकार मनुष्यों के मानवाधिकारों एवं जनता के जनाधिकारों की रक्षा करने का उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं करते, वे संगठन एवं सरकारें कभी न्यायशील सिद्ध नहीं हो सकते।*

प्रश्न-13 : समाज में मौद्रिक ब्याजप्रथा की उत्पत्ति का मूल कारण क्या है?

उत्तर-13 : *मुद्रा एक वैकल्पिक संसाधन है। यह समस्त प्राकृतिक एवं अभिसर्जित संसाधनों का विकल्प है। किसी भी मौलिक अथवा वैकल्पिक संसाधन को ही समस्त प्रकार के उत्पादनों का आधार माना जाता है। संसाधन के विना कोई भी उत्पादन संभव नहीं होता। उत्पादन को ही उपभोग्य माना जा सकता है। संसाधन को उपभोग्य नहीं माना जा सकता। संसाधन वह स्रोत है, जिससे उत्पादन होता है। स्रोत के नष्ट होने पर उत्पादन संभव नहीं रह जाता। संसाधनों की समाप्ति से जीवनयापन संभव नहीं रह जाता। संसाधनों से प्राप्त होनेवाला उत्पादन उपभोग करने से संसाधन समाप्त नहीं होते। अतः संसाधनों को बनाए रखना किसी भी समाज या राष्ट्र की अनिवार्यता है। मुद्रा पर व्याज, टैक्स और शुल्क मौद्रिक संसाधन को क्षीण करता है। गाय बनी रहे, तो दूध का उत्पादन होता रहेगा। दूध उपभोग्य है, किन्तु जो लोग मूर्खतावश गाय को उपभोग्य मान लेते हैं, उन्हें दूध का उत्पादन मिलना बन्द हो जाता है। इस छोटे से उदाहरण से इस सम्पूर्ण अवधारणा को समझा जा सकता है। स्पष्ट है कि संसाधनों पर व्याज, टैक्स, शुल्क की नीति को लागू करने के पीछे मूर्खता या धूर्तता की भूमिका होती है। कुछ व्यक्ति जो मूर्ख हैं, वे संसाधनों का उपभोग करने लगते हैं। कालिदास की भाँति वे जिस डाल पर बैठना है, उसी को काटने लगते हैं। संसाधन पर व्याज, टैक्स, शुल्क थोपकर संसाधन को क्षीण कर डालते हैं, जिससे उत्पादन गिरने लगता है।*

किसी भी उद्यम को संचालित करने के लिए पूँजी की आवश्यकता होती है। पूँजी के रूप में मुद्रा ही सबसे बड़ा साधन है, क्योंकि मुद्रा के द्वारा भूमि, भवन, यन्त्र, उपकरण आदि सभी प्रकार के संसाधन जुटाए जा सकते हैं। अतः पूँजी के रूप में प्रयुक्त होनेवाली मुद्रा पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स या शुल्क उस पूँजी को ही बोझिल बनाकर क्षीण कर देते हैं, जिससे उत्पादन की क्रियाएँ अवरुद्ध होने लगती हैं। स्पष्ट है कि मुद्रा पर व्याजादि की प्रथा एक षड़यन्त्र है, जो समाज या राष्ट्र के आर्थिक विकास में बाधक है। कुछ लोग जो उत्पादन कर्म नहीं करना चाहते, वे ही षड़यन्त्रपूर्वक संसाधन को उपभोग सामग्री बना डालते हैं। मुद्रा पर व्याज आदि की प्रथा उत्पन्न होने का मूल कारण यह अकर्मण्यता ही है। वास्तव में मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन की दूषित नीति द्वारा व्याज, टैक्स एवं शुल्क का भार थोपकर मुद्रा को दुर्लभ बनाने से समाज में मुद्रा की पूर्ति घट जाती है, जिससे मौद्रिक पूँजी का अभाव उत्पन्न होने लगता है, और मुद्रा की वर्तमान माँग को पूरा करनेवाले पूँजीपति प्रकट होने लगते हैं। इन पूँजीपतियों को अनैतिक पोषण प्रदान करनेवाली यह सरकारी नीति ही मौद्रिक व्याजप्रथा को जन्म देती है। यदि सरकार मुद्रा के शुद्ध स्वरूप, संतुलित मौद्रिक तरलीकरण एवं निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील नीति अपनाए, तो समाज में मौद्रिक व्याजप्रथा कभी उत्पन्न नहीं हो सकती।

प्रश्न-14 : मदर इण्डिया जैसी प्रसिद्ध फिल्मों में व्याजखोरी के कारण देश की जो दुर्दशा दिखाई गयी है, क्या वह इस निर्व्याज ऋणसेवा से समाप्त हो जाएगी?

उत्तर-14 : *किसी समाज या राष्ट्र में व्याजप्रथा वह भयंकर रोग है, जो स्पष्ट रूप से मौद्रिक शोषण का कार्य करती है, तथा समाज को भयंकर दीनता एवं दरिद्रता की दशा में पहुँचा देती है। व्याजखोरी को अप्रत्यक्ष लूट या डकैती के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। किसी की मजबूरी का लाभ उठाने के लिए उसे मौद्रिक ऋण प्रदान करके व्याज के रूप में उसके श्रमपूर्वक किए गए उपार्जन का निरन्तर शोषण करते रहना कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता। न्याय ही समाज एवं राष्ट्र का धर्म है। जो समाज या राष्ट्र इस न्यायधर्म का उल्लंघन करता है, वह निश्चित रूप से उस समाज या राष्ट्र के लिए घातक होता है। किसी भी समाज की दुर्दशा का मूल कारण न्यायधर्म की उपेक्षा ही है। न्यायसंगत आर्थिक नीतियों को अस्वीकार करके मजबूरों या गरीबों का शोषण करने वाली व्याजप्रथा कभी किसी राष्ट्र या समाज के लिए स्वास्थ्यवर्धक सिद्ध नहीं हो सकती। निर्भार मुद्राप्रचालन प्रारम्भ होते ही मौद्रिक शोषण के सभी अवसर समाप्त हो जाते हैं, तथा समर्थों द्वारा असमर्थों की विवशताओं या मजबूरियों को भुनाने की मौद्रिक व्याजप्रथा स्वतः समाप्त हो जाती है, जिससे समाज एवं राष्ट्र के अधिकांश सदस्यों एवं नागरिकों की आर्थिक दशा सुधरने लगती है।*

प्रश्न-15 : तथाकथित धनिक (सेठ, साहूकार) जो व्याजखोरी के माध्यम से दूसरों के श्रमरक्त को पीकर अपना मांसवर्धन विगत हजारों वर्षों से करते चले आ रहे हैं, क्या वे निर्भार मुद्राप्रचालन के इस अभियान का विरोध नहीं करेंगे?

उत्तर-15: *मौद्रिक व्याजखोरी उन्मूलन के इस अभियान का विरोध अब वे भी नहीं करेंगे, क्योंकि समाज में शिक्षा की वृद्धि से उनमें भी सद्बुद्धि का संचार अब होने लगा है। बुद्धि की न्यूनता ही दुष्कर्म करने को प्रेरित करती है। किन्तु जैसे-जैसे बुद्धिमत्ता बढ़ती है, लोग दूसरों का शोषण करना स्वयं छोड़ देते हैं। पाश्चात्य विद्वान साहित्यकार शेक्सपियर का उदाहरण*

इसके लिए प्रासंगिक है। शेक्सपियर का जन्म एक व्याजखोर परिवार में हुआ था। शेक्सपियर जैसे-जैसे बड़े हुए, वे शिक्षित एवं बुद्धिमान बने, उनको दूसरों का शोषण करनेवाली इस प्रथा के अनौचित्य का बोध हुआ। इस अन्यायकारी व्याजप्रथा ने उनकी बुद्धि को झकझोर दिया। उन्होंने इस खानदानी दुष्कर्म को छोड़कर साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश किया और एक महान साहित्यकार बने। यदि वे व्याजखोरी के अपने खानदानी दुर्व्यवसाय को ही आगे बढ़ाते, तो निश्चित रूप से वे इतने सुविख्यात व्यक्तित्व के धनी नहीं बन पाते। व्याजखोरी द्वारा खींचे गए धन से बने हुए धनिकों को मानवीय समाज में कोई नैतिक सम्मान प्राप्त नहीं हो सकता। वे सदैव हेय दृष्टि से देखे जाते हैं, तथा लोगों के बीच घृणित बने रहते हैं। इतना अपमान सहन करते हुए जीवित रहना किसी भी शिक्षित मनुष्य के लिए कठिन हो जाता है। अतः शिक्षा के प्रभाव से अब व्याजखोर लोग भी इस घृणित मार्ग से स्वतः हटने लगे हैं। राष्ट्रीय सरकारों को भी यह बात अब शीघ्र ही समझ में आ जाएगी।

प्रश्न-16 : 'व्याजखोरी अकर्मण्यता एवं पशुता का प्रतीक है' - क्या यह कथन सटीक है?

उत्तर-16 : *अनुपार्जित उपभोग ही मनुष्य को पशुतुल्य बना देती है। श्रम के अनुपात में उपार्जित किये गए फल का उपभोग ही मानवता का लक्षण है। जितना श्रम उतना धन प्राप्त करना ही न्यायोचित धनोपार्जन कहलाता है। पशुओं द्वारा प्राकृतिक रूप से उत्पन्न फलों का उपभोग किया जाता है। प्राकृतता ही पशुता है। मनुष्य एक सांस्कृतिक प्राणी है। प्रकृति का संशोधन संस्कृति के द्वारा ही संभव होता है। प्राकृतिक जीवनयापन ही पशुता है, सांस्कृतिक जीवनयापन ही मानवता है। प्राकृतता के कारण ही समाज में जंगलराज उत्पन्न होता है। अतः मनुष्यों ने अपने लिए प्रकृति को शुद्ध करने का उपाय संस्कृति के रूप में विकसित किया है। पशु भाग्यवादी होते हैं, मनुष्य कर्मवादी होते हैं। कर्मानुसार फल प्राप्त करना ही मनुष्य अपना धर्म समझते हैं। जंगल में उगी हुई, रास्ते में पड़ी हुई, दूसरों द्वारा कमायी गयी वस्तुओं एवं सेवाओं का उपभोग करनेवाला समाज स्वतः जंगल में परिवर्तित हो जाता है। मानवता एवं सामाजिक सभ्यता नष्ट हो जाती है।*

*जंगल में अज्ञान एवं अकर्मण्यता होती है। ज्ञान के विना कर्म का उदय नहीं होता। कर्म के विना मानवीय फल का उत्पादन नहीं होता। कर्मों द्वारा उत्पादित फल का उपभोग करना ही मानवीय धर्म है। पाशवधर्म और मानवधर्म में इतना ही भेद है। मनुष्य के लिए अकर्मण्यता अथवा आलस्य को सबसे बड़ा शत्रु माना गया है। नीतिवचन प्रसिद्ध है-**'आलस्यो हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।'** दैवीभाग्य के भरोसे जीवनयापन करनेवाले प्राणी ही 'पशु' कहलाते हैं। प्रकृति को ही वेदों में अधिदैव कहा गया है। कहावत प्रसिद्ध है-**'दैव-दैव आलसी पुकारा।'** अतः मनुष्य को भाग्यवादी नहीं, कर्मवादी होना चाहिए। कमाकर खाना ही मानवता का लक्षण है। दूसरों की कमाई को मौद्रिक व्याजप्रथा की दुर्नीति से खींचकर अपने धनभण्डार को बढ़ाना कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता। इस्लाम ने भी व्याजप्रथा को हराम घोषित किया है। व्याजप्रथा के माध्यम से मुफ्त में प्राप्त होनेवाला धन मनुष्य को अकर्मण्य बनाता है, इस दोष के कारण ही उसमें तमोगुण की वृद्धि होती है, जड़ता बढ़ती है, प्रतिभा क्षीण होती है और अन्ततः वह मनुष्य अपनी मानसिक क्षमता को खोकर पशुवत् दशा को प्राप्त हो जाता है। निश्चित रूप से मौद्रिक व्याजखोरी अकर्मण्यता का प्रतीक है, क्योंकि अकर्मण्य व्यक्ति ही व्याजखोरी या चोरी का मार्ग अपनाता है, अथवा इस व्याजखोरी या चोरी के मार्ग को अपनानेवाला अकर्मण्य हो जाता है।*

प्रश्न-17 : ऋणवापसी न होने पर ऋणवसूली की प्रक्रिया क्या होगी? क्या ऐसे मामलों में ऋणक्षमा की नीति भी सरकार द्वारा अपनायी जा सकती है?

उत्तर-17 : *ऋण केवल किसी जीविका या रोजगार के लिए ही प्रदान करना अधिक उचित है। ऐसे लोग जिनके पास कोई स्थूल सम्पत्ति न हो, उन्हें किसी उद्यम की स्थापना के लिए किसी अन्य व्यक्ति, संस्थान अथवा सरकार द्वारा ऋण प्रदान किया जा सकता है। अन्य किसी उद्देश्य से ऋण प्रदान करने का कोई विशेष औचित्य सिद्ध नहीं होता। अन्य मामलों में कोई भी उत्पादन कार्य न होने पर ऋण के लिए प्रतिफल प्राप्त नहीं हो सकता। प्रतिफलविहीन धनदान को ऋण की परिभाषा में नहीं लिया जा सकता। अतः जीविकोपार्जन के अतिरिक्त किसी उद्देश्य से केवल उधार के रूप में ही धन का लेन-देन प्रशस्त हो सकता है। ऋण के लिए प्रतिफल भी केवल उत्पादन द्वारा सिद्ध होनेवाले लाभ या आय पर ही विनियोग की अन्य राशियों के साथ समानुपातिक रूप से प्राप्त किया जा सकता है। यदि उद्यम में कोई लाभ नहीं उत्पन्न होता है, तो ऋण के लिए प्रतिफल भी सिद्ध नहीं हो सकता। तथापि हानि के लिए भी ऋणदाता उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। ऋण की वसूली न होने पर ऋण को किसी भी रूप में क्षमायोग्य नहीं ठहराया जा सकता। ऋण की भरपाई अनिवार्य होती है, क्योंकि ऋण के बदले में किसी प्रकार की पूर्वधारित सम्पत्ति को प्रतिभूति के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। किसी स्थूल सम्पत्ति के सुलभ होने पर दिया जानेवाला धन कभी ऋण की परिभाषा में सम्मिलित नहीं हो सकता। उसे केवल तरलीकरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। ऋण जारी करनेवाले संस्थान को ऋण की वसूली अनिवार्य रूप से करने का अधिकार न्यायसंगत है। ऋण दूसरों की जमानत अथवा सरकारी रोजगारनीति के माध्यम से भी प्रशस्त हो सकता है। अन्य किसी भी रूप में ऋण का लेन-देन करना उचित नहीं हो सकता, बल्कि ऐसा कोई भी प्रतिफलविहीन धन का आदान-प्रदान उधार के रूप में अवश्य परिभाषित किया जा सकता है। उधार की वापसी भी अनिवार्य होती है। वापसी की शर्त के विना दिया जानेवाला धन उधार नहीं, बल्कि दान या उपहार के रूप में परिभाषित होता है। अतः ऋण या उधार के रूप में दी गयी कोई भी राशि की वसूली अनिवार्य होने के कारण ऋणक्षमा का सिद्धान्त नहीं अपनाया जा सकता, बल्कि ऋणग्राही के असमर्थ होने, मृत्यु होने आदि की दशाओं में उसके उत्तराधिकारीगण इस ऋण या उधार की वापसी करने हेतु बाध्य होते हैं। ऋण या उधार लेकर न चुकाना एक गंभीर अपराध है, जो मनुष्य को अकर्मण्य, पशुतुल्य एवं अपराधी बनाता है। ऋण या उधार न चुकाने की प्रवृत्ति चोरी अथवा डकैती द्वारा ही परिभाषित हो सकती है, जो कि निषिद्ध आचार अथवा व्यवहार कहा जा सकता है। इस दुराचार और दुर्व्यवहार को क्षमायोग्य नहीं माना जा सकता। ऋण या उधार का लेन-देन केवल लिखित सहमतिपत्र द्वारा ही होना चाहिए। इससे भविष्य में किसी विवाद की संभावना नहीं रहती, तथा कोई विवाद उत्पन्न होने पर यह लिखित प्रमाण ही मान्य होता है। इन्हीं लिखित शर्तों के अनुसार ही ऋण या उधार की वसूली हो सकती है।*

प्रश्न-18 : जिनके पास कोई स्थूल सम्पत्ति नहीं है, उन्हें जीविका अथवा रोजगार के रूप में प्रदान किये जानेवाले ऋण या उधार के लिए सरकार की न्यायसंगत मौद्रिक नीति क्या होनी चाहिए?

उत्तर-18 : *जिनके पास कोई स्थूल संसाधन या सम्पदा है, वे निश्चित रूप से तरलीकरण की प्रक्रिया द्वारा पूँजी प्राप्त करके सहज ही अपना उद्यम स्थापित कर सकते हैं, जो उनकी जीविका या रोजगार के रूप में प्रतिष्ठित हो सकता है। किन्तु जिनके पास कोई स्थूल संसाधन या सम्पदा सुलभ नहीं है, वे अपनी जीविका अथवा रोजगार के लिए कृषि उद्यम अथवा वाणिज्यिक उद्यम की स्थापना हेतु आवश्यक पूँजी जुटाने के लिए सरकार की मौद्रिक तरलीकरण नीति से लाभान्वित नहीं हो सकते। अतः उनके लिए ही सरकार द्वारा मौद्रिक ऋण अथवा उधार प्रदान करने की नीति अपनायी जा सकती है, ताकि वे अपनी जीविका अथवा रोजगार के लिए आवश्यक उद्यम स्थापित कर सकें। निजी सम्पदा के तरलीकरण की प्रक्रिया से पूँजी जुटानेवाले अपने उद्यम में विनियोजित पूँजी के स्वामी स्वयं होते हैं। किन्तु अन्य पूँजी विनियोजक भी किसी उद्यम में पूँजी का विनियोग कर सकते हैं। पूँजी का विनियोग करनेवाला ही उस उद्यम में तृतीयांश स्वामित्व का लाभ प्राप्त कर सकता है। पूँजी के अभाव में उद्यम की स्थापना करनेवाले व्यक्ति द्वारा अन्य परिचितों, मित्रों या सरकार से निवेश, ऋण या उधार के रूप में पूँजी प्राप्त करी जा सकती है। निवेशक को उद्यम पर तृतीयांश स्वामित्व का अधिकार प्राप्त होता है, किन्तु ऋणदाता या उधारदाता को उद्यम पर स्वामित्व का अधिकार प्राप्त नहीं होता। निवेश में लाभ-हानि दोनों पर निवेशक की हिताधिकारिता होती है। किन्तु ऋणदाता केवल लाभ पर हिताधिकारी होता है, जबकि उधारदाता लाभ-हानि दोनों में से किसी पर भी हिताधिकारी या उत्तरदायी नहीं होता। सरकार द्वारा ऋणदाता के रूप में उद्यम के लाभ में से प्राप्त किये जानेवाले प्रतिफल को ऋण की वापसी के रूप में देखा जा सकता है। जैसे-जैसे यह ऋण वापस होगा, वैसे-वैसे उद्यमी का स्वत्वाधिकार अपने उद्यम पर बढ़ता जाएगा। इसप्रकार से ऋण की पूर्ण वापसी होने के पश्चात् वह अपने उद्यम पर श्रमिक एवं पूँजीपति के रूप में दो तिहाई हिस्से का स्वामी बन जाएगा, तथा तीसरा समानुपातिक स्वामित्व सरकार के लिए सुरक्षित रहेगा।*

प्रश्न-19 : क्या यह निर्भार मुद्राप्रचालन की नीति वर्तमान विश्व में प्रचलित दूषित पूँजीवाद को समाप्त कर सकती है?

उत्तर-19 : *न्याय की दृष्टि से उत्पादन के केवल तीन साधन होते हैं- श्रम, पूँजी, सुविधा। उत्पादन के इन तीन साधनों में पूँजी भी एक आवश्यक एवं अनिवार्य साधन है। श्रम, पूँजी, सुविधा के विनियोग से ही किसी उद्यम में उत्पादन कार्य प्रारम्भ हो सकता है। अतः उद्यम की स्थापना में श्रमिक एवं सरकार के साथ पूँजीपति का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। न्यायशील अर्थव्यवस्था में उत्पादन के ये तीनों साधन समान रूप से महत्त्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि इन तीन साधनों के द्वारा ही संसार के सभी उत्पादन संभव होते हैं। इनमें से किसी एक साधन का वर्चस्व स्थापित होने पर उसके नाम से वाद प्रकट होता है। किसी उद्यम पर किसी एक साधन का वर्चस्व स्थापित होना कभी न्यायसंगत सिद्ध नहीं हो सकता। अतः पूँजीवाद, श्रमवाद, राज्यवाद इत्यादि तीनों प्रकार के 'वाद' निरर्थक होते हैं। इन तीनों में से किसी भी 'वाद' पर आधारित अर्थव्यवस्था कभी न्यायशील नहीं हो सकती। तीनों साधनों की समान रूप से महत्ता होने के कारण तीनों साधनों को समाधिकारिता प्राप्त होनी ही चाहिए। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में*

पूँजीपति ही एकमात्र स्वामी बन बैठता है, तथा श्रमिक एवं सरकार के रूप में अन्य दोनों पक्षों के हिताधिकारों को वह न्यून करता अथवा समाप्त कर देता है। इसीप्रकार से अन्य दोनों साधनों में से भी जिस किसी साधन का वर्चस्व सिद्ध हो जाता है, उसके द्वारा भी अन्य दोनों के हिताधिकारों का न्यूनीकरण अथवा समाप्तीकरण कर दिया जाता है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में पूँजी का पूर्ण वर्चस्व स्थापित होने की दशा तभी उत्पन्न होती है, जबकि राष्ट्रीय मौद्रिक नीति दोषपूर्ण हो, अन्यायकारी हो। न्यायशील राष्ट्रीय मौद्रिक नीति स्थापित होने पर उत्पादन के तीनों साधन समान रूप से हिताधिकारी सिद्ध होते हैं। संतुलित मौद्रिक तरलीकरण एवं निर्भार मुद्राप्रचालन की न्यायशील नीतियाँ पूँजी के अभाव को पूर्णतः समाप्त कर देती हैं, जिससे पूँजी की दुर्लभता उत्पन्न नहीं होती। न्यायशील मौद्रिक नीति में संतुलित तरलीकरण एवं निर्भार मुद्राप्रचालन प्रतिष्ठित होने के कारण पूँजी पर्याप्त मात्रा में सार्वजनिक रूप से सुलभ बनी रहती है। मौद्रिक पूँजी की सर्वसुलभता के कारण पूँजी का अभाव उत्पन्न नहीं होता, जिससे पूँजी को विशेष रूप से महिमामण्डित होने और अपना वर्चस्व स्थापित होने का कोई अवसर प्राप्त नहीं होता। एक स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था का उदय होता है, जिसमें उत्पादन के किसी एक साधन को अन्य साधनों पर अपना वर्चस्व स्थापित करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं होता। बल्कि उस न्याायशील अर्थव्यस्था में ऐसी परिस्थितियाँ ही नहीं बनतीं, जिसमें ऐसे भयंकर अवसर उत्पन्न हों। अतः निर्भार मुद्राप्रचालन की यह प्रणाली पूँजी को सर्वसुलभ बनाकर दूषित पूँजीवाद को समाप्त करती है, तथा पूँजी के एकाधिकारी स्वामित्व सम्बन्धी दोषों को भी दूर करके उत्पादन के तीनों साधनों को समाधिकारी बना देती है। इस त्रिकोणीय अर्थव्यवस्था का सैद्धान्तिक प्रतिपादन हमारे 'न्यायशील अर्थशास्त्र' में स्पष्ट रूप से किया गया है। उस ग्रन्थ में इसका अध्ययन किया जा सकता है।

प्रश्न-20 : मुद्रा के निगमन या प्रचालन पर टैक्स लगाना किस प्रकार से अनैतिक है?

उत्तर-20 : *जिसप्रकार से मुद्रा पर व्याज लगाना अनैतिक है, उसीप्रकार से मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन पर टैक्स लगाना भी अनैतिक है। मुद्रा जब तक संसाधन के रूप में प्रतिष्ठित रहती है, तब तक उपभोग्य नहीं मानी जा सकती। संसाधनों का उपभोग करने से उत्पादन की संभावनाएँ समाप्त होने लगती हैं। पूँजीगत संसाधनों पर किसी भी प्रकार की उपभोग वाली नीति नहीं अपनायी जा सकती। जिन-जिन कारणों से मौलिक संसाधनों की क्षीणता उत्पन्न हो, उन-उन कारणों का त्याग आवश्यक है। संसाधन के विना कोई भी समाज या राष्ट्र जीवित नहीं रह सकता। संसाधनों द्वारा किए गए उत्पादन को उपभोग्य माना जा सकता है। अतः उत्पादन पर उसके तीनों साधनों के स्वामियों को समान रूप से लाभार्थी माना जाता है। सरकार द्वारा मुद्रा का निगमन एवं प्रचालन सदैव निर्भार बना रहे, तो राष्ट्र के नागरिकों द्वारा भी मुद्रा पर व्याज की प्रथा का त्याग हो जाता है। सरकारी नीतियों के कारण ही मुद्रा सार्वजनिक तल पर दुर्लभ बनी रहती है। इसी दुर्लभता के कारण नागरिकों के बीच मुद्रा पर व्याज की प्रथा को उत्पन्न होने का अवसर मिलता है। सरकार की मौद्रिक नीति दूषित होने के कारण ही समाज में व्याजखोरी पनपती है। पूँजीगत संसाधन के रूप में मुद्रा यदि तरलीकरण अथवा ऋण की न्यायसंगत नीतियों द्वारा सहज ही सर्वसुलभ बनी रहे, तो मौद्रिक व्याजप्रथा जैसी समस्याएँ स्वतः निर्मूल हो जाती हैं। इसीप्रकार से टैक्स अथवा शुल्क का भार यदि सरकार की दूषित मौद्रिक नीति के कारण मुद्रा पर थोपा जाता है, तो भी मौद्रिक संसाधन में क्षीणता आती है, जिससे उत्पादन प्रभावित होता है। उत्पादन प्रभावित होने से आर्थिक विकास*

*भी प्रभावित होता है। फलस्वरूप राष्ट्र में बेरोजगारी, गरीबी, भुखमरी जैसी समस्याएँ उत्पन्न होने लगती हैं। अतः मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन पर व्याज, टैक्स अथवा शुल्क की नीति किसी भी तर्क से न्यायसंगत नहीं ठहरायी जा सकती। अतः न्यायशील सरकार मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन को सदैव निर्भार बनाए रखती है। किन्तु अन्यायकारी सरकारें मुद्रा को बोझिल बनाकर उसकी सुलभता और चलनगति को कठिन बना डालती हैं, जिससे समाज के पूँजीपति वर्ग को कर्महीन फलभोग प्राप्त होता रहता है, और कर्मवान लोग दीन, हीन, दरिद्र एवं दुःखी बने रहते हैं। **'कर्म किसी और का, फल किसी और का'** जैसी कहावत इन्हीं राष्ट्रीय कुनीतियों के कारण चरितार्थ होती हैं। अतः मुद्रा पर व्याज, टैक्स, शुल्क आदि का भार थोपने की नीति कभी न्यायसंगत नहीं हो सकती।*

प्रश्न-21 : मुद्रा किस प्रकार से संसाधन के रूप में कार्य करती है?

उत्तर-21 : *उत्पादन के तीन साधन होते हैं– श्रम, पूँजी, सुविधा। ये तीनों साधन ही समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें से पूँजी प्रायः मौद्रिक होती है। मुद्रा ही पूँजी के रूप में कार्य करती है। प्रायः सभी प्रकार के पूँजीगत संसाधन मुद्रा के माध्यम से जुटाए जा सकते हैं। भूमि, भवन, यन्त्र, उपकरण, नगद धन आदि सभी प्रकार की संसाधन–सम्पदाएँ मुद्रा द्वारा अर्जित हो सकती हैं। मुद्रा सभी प्रकार की स्थूल सम्पदाओं का विकल्प है। अतः मुद्रा को वैकल्पिक संसाधन के रूप में जाना जाता है। मुद्रा वास्तविक संसाधन न होकर काल्पनिक है, किन्तु सभी संसाधनों का विकल्प होने के कारण यह महत्त्वपूर्ण हो जाती है। इसप्रकार से मुद्रा सर्वत्र संसाधन के रूप में कार्य करती है। अतः आर्थिक जगत् में मुद्रा को पूँजीगत संसाधन के रूप में मान्यता प्राप्त हो जाती है। जो सभी उत्पादनशील उद्यमों में पूँजी के रूप में प्रतिष्ठित होकर एक महत्त्वपूर्ण संसाधन की भूमिका निभाती है। मौद्रिक पूँजी प्राप्त करके किसी भी उद्यम की स्थापना करी जा सकती है, तथा समाज में मौद्रिक पूँजी की सुलभता को तरलीकरण, निवेश, ऋण एवं उधार आदि की न्यायसंगत नीतियों द्वारा प्रतिष्ठित किया जा सकता है।*

प्रश्न-22 : कर्मठों की दरिद्रता और अकर्मण्यों की धनाढ्यता का कारण क्या मुद्रा पर व्याजादि की प्रथा ही है?

उत्तर-22 : *मुद्रा पर व्याज की प्रथा वास्तव में परिश्रम के विना प्रतिफल पाने का एक भयंकर कुचक्र है। संसार में कोई भी मानवी उत्पादन परिश्रम के विना नहीं होता। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह जंगल में नहीं रह सकता। जंगली व्यवस्था मानवी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ नहीं है। अतः मनुष्य एक सामाजिक एवं राष्ट्रीय व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव करता है। जंगली अथवा प्राकृतिक उत्पादन पशुओं के जीवनयापन के लिए पर्याप्त हो सकते हैं, किन्तु मनुष्य के लिए नहीं! प्राकृतिक उत्पादन में मानवी श्रम की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु सांस्कृतिक या सामाजिक उत्पादन में मानवी श्रम की आवश्यकता होती है। मानवी सभ्यता का विकास मानवी श्रम पर निर्भर करता है। जो मनुष्य कर्म या श्रम नहीं करना चाहते, वे पशुतुल्य होते हैं। उन्हें दूसरों के श्रम का शोषण करके जीवनयापन करना पड़ता है। मनुष्य होते हुए परिश्रम न करने की प्रवृत्ति ही दूसरों के श्रमरक्त को खींचकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रेरित करती है। मुद्रा पर व्याज की प्रथा इसी श्रमरक्त के शोषण के लिए एक भयंकर उपाय है, जो बड़ी सफलतापूर्वक इस भयावह कृत्य को सम्पन्न करती है। एक बार जिसने किसी भी प्रकार से लूट–खसोटकर अथवा अन्य*

विधियों से धनसंग्रह कर लिया, उसने उस धन को व्याजयुक्त ऋण देकर दूसरों के श्रमरक्त का शोषण प्रारम्भ कर दिया। किन्तु सरकारी मौद्रिक नीति के सहयोग के विना यह कुकृत्य संभव नहीं होता। दूषित सरकारों की साँठ–गाँठ से ये धनपति देश में मुद्रा को दुर्लभ बनाकर मौद्रिक संकट उत्पन्न करते हैं, तथा इस संकट में पाखण्डपूर्ण सहयोगी की भूमिका निभाने के लिए व्याजमयी ऋण देकर जनसाधारण का श्रमरक्त चूसने लगते हैं। साधारण जनता का श्रमरक्त चूसकर उन्हें दीन, हीन, दरिद्र एवं दुःखी बना डालते हैं। अधिकांश प्रजा धनहीन होकर निर्बल हो जाती है। निर्बल को अनेक प्रकार के बन्धनों में बाँधकर उसे दास बना लिया जाता है, जो बँधुवा मजदूरी प्रथा आदि के रूप में दृश्यमान होती है। इसप्रकार से श्रम करनेवाले निर्धन एवं श्रम न करनेवाले धनाढ्य होते चले जाते हैं। निर्धन लोग दास बनने को विवश हो जाते हैं, और धनी लोग दस्यु बनकर उनके शिर पर सिंह और शृगाल की भाँति सवार हो जाते हैं। इसप्रकार से कर्मठों की निर्धनता और अकर्मण्यों की धनाढ्यता का अस्तित्व प्रकट होता है, जिससे राष्ट्र में जंगलराज स्वतः प्रतिष्ठित हो जाता है। इस विषय में यह पद्य प्रसिद्ध है– ***'कर्मठ जब निर्धन रहे, अकर्मण्य धनवान। तब जानो उस राष्ट्र का अन्धा न्यायविधान।।'***

प्रश्न-23 : क्या सरकार की दोषपूर्ण अधिकोषीय नीति (Banking Policy) ही किसी देश की आर्थिक दुर्दशा का मूल कारण है?

उत्तर-23 : *मुद्रा ही किसी राष्ट्र की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की नींव होती है। मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन के लिए प्रतिष्ठित संस्थान को ही राजकीय अधिकोष कहते हैं। यह अधिकोष ही केन्द्रीय बैंक अथवा रिजर्व बैंक के नाम से प्रसिद्ध है। सरकार द्वारा इसी बैंक अथवा अन्य बैंकों के माध्यम से जो मुद्रा के निगमन एवं प्रचालन सम्बन्धी नीतियाँ अपनायी जाती हैं, उन्हीं मौद्रिक नीतियों के दूषित होने पर राष्ट्र की आर्थिक दुर्दशा प्रकट होती है। राष्ट्रीय मौद्रिक नीति के तीन विषय होते हैं– मुद्रानिर्धारण, मुद्रानिगमन, मुद्राप्रचालन। यदि इन तीनों विषयों पर राष्ट्रीय मौद्रिक नीति न्यायसंगत बनी रहे, तो राष्ट्र में मौद्रिक अपराध, मौद्रिक संकट एवं मौद्रिक समस्याएँ उत्पन्न नहीं होतीं, तथा राष्ट्र का आर्थिक विकास, आर्थिक प्रगति एवं आर्थिक समृद्धि सरलतापूर्वक गतिमान बनी रहती है, और शीघ्र ही राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था अपने चरम विकास पर पहुँचकर आर्थिक संतुलन को प्राप्त हो जाती है, जहाँ पर न कोई बेरोजगारी होती है, न कोई गरीबी। आर्थिक अभाव नाम की कोई वस्तु उस राष्ट्र में दृश्यमान नहीं रह जाती। आर्थिक दुर्दशा का तो प्रश्न ही नहीं उठता। पूर्ण आर्थिक स्वावलम्बन एवं स्वतन्त्रता की प्राप्ति का एकमात्र उपाय सरकार की न्यायशील मौद्रिक नीति ही है। इस मौद्रिक नीति को अधिकोषीय नीति भी कहते हैं।*

प्रश्न-24 : क्या निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली लागू होने पर व्यक्तियों द्वारा अनावश्यक ऋण लेने और ऋणग्रस्त होकर मानसिक अशान्ति एवं आत्मघात करने की प्रवृत्ति पर अंकुश लगेगा?

उत्तर-24 : *मुद्रा पर व्याज, टैक्स एवं शुल्क का भार निश्चित रूप से भयंकर है, तथा मौद्रिक शोषण जैसे भयंकर अपराध को जन्म देनेवाला है। इसके कारण पूँजी का अभाव भी उत्पन्न होता है। मुद्रा दुर्लभ हो जाती है। इस दुर्लभता के कारण मुद्रा अत्यधिक मूल्यवान अथवा महत्त्वपूर्ण सिद्ध होने लगती है। पूर्ति को कठिन बनानेवाली यह भारवाही मौद्रिक नीति मुद्रा की तुच्छ माँग को भी विशाल सिद्ध कर देती है और इस विशाल माँग की पूर्ति करनेवाले*

शोषणकारी व्यक्ति और सत्ताएँ खड़ी हो जाती हैं, जो लोगों का मौद्रिक शोषण करके उन्हें दीन, हीन, दरिद्र और दुर्बल बना डालती हैं, जिससे वे दुःखी होकर आत्मघात करने को भी विवश हो जाते हैं अथवा दास बनकर अपनी स्वतन्त्रता खो बैठते हैं। आर्थिक परतन्त्रता ही वास्तव में समस्त प्रकार की स्वतन्त्रताओं का नाश कर डालती है। लोग व्याजादि के भार से युक्त ऋण लेकर ऐसे भयंकर कुचक्र में फँस जाते हैं, जिससे निकलना उनके लिए असंभव हो जाता है। अपने परिश्रम की गाढ़ी कमाई को व्याजादि के रूप में लुटाते हुए सदैव गरीबी और भुखमरी का जीवन जीते तथा दासता अथवा आत्महत्या के लिए विवश होते रहते हैं। बँधुवा मजदूरी प्रथा के पीछे सरकार की भारवाही मौद्रिक नीति ही कार्य करती है। अतः निर्भार मुद्रा प्रचालन प्रणाली नागरिकों को मानसिक अशान्ति और आत्मघात से बचाने में पूर्णतः समर्थ है। यदि सरकार द्वारा व्याज, टैक्स और शुल्क से मुक्त तरलीकरण, ऋण या उधार की नीति अपनायी जाए तथा उससे प्राप्त होनेवाले लाभ को ऋण या उधार की वापसी के रूप में स्वीकार किया जाए, तो यह मौद्रिक नीति समस्त नागरिकों के आर्थिक हितों की रक्षा करने में समर्थ सिद्ध हो सकती है।

प्रश्न-25 : यदि सरकार द्वारा निर्भार मुद्राप्रचालन की नीति अपनायी जाए, और मुद्रा पर व्याज, शुल्क, टैक्स न लगाया जाए, तो राजकोष का निर्माण कैसे होगा, तथा राजकीय व्ययों की पूर्ति कैसे होगी?

उत्तर-25 : *राजकोष का निर्माण करने के लिए संसाधन नहीं, उत्पादन को आधार बनाना न्यायसंगत है। राजकोष सार्वजनिक उपयोग एवं उपभोग के लिए प्रयुक्त होता है। अतः मौलिक संसाधनों द्वारा निर्मित होनेवाला राजकोष सम्पूर्ण राष्ट्र को दरिद्र बना सकता है। मौलिक संसाधनों के माध्यम से उत्पादन करके उपभोग करने की नीति अपनायी जा सकती है। एक बीज बोने से अनेक बीजों का उत्पादन होता है। यदि उस मौलिक बीज का उपभोग किया गया, तो अनेक बीजों के उत्पादन की संभावना समाप्त हो जाएगी। अतः कोई भी वस्तु जो मौलिक संसाधन के रूप में प्रतिष्ठित हो, उसके किसी भी अंश को उपभोग द्वारा नष्ट करने से आर्थिक विनाश एवं दरिद्रता उत्पन्न होती है। सरकार द्वारा मुद्रा का निगमन एवं प्रचालन सभी स्थूल संसाधनों के विकल्प के रूप में किया जाता है। अतः मुद्रा को वैकल्पिक संसाधन कहा जा सकता है। जहाँ कहीं भी मुद्रा संसाधन के रूप में प्रयुक्त हो रही है, उस पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स, शुल्क अथवा अन्य किसी भी प्रकार का भार या बाधा खड़ी करना कभी न्यायसंगत नहीं हो सकता। राजकोष के निर्माण हेतु शुद्ध उत्पादन में से तृतीयांश राजस्व की नीति ही न्यायसंगत सिद्ध होती है, जिससे सभी राजकीय व्ययों की पूर्ति सरलतापूर्वक हो सकती है। अतः मुद्रा को सरकार की ओर से प्रचालित किए जाने पर वह मौलिक संसाधन के रूप में गतिमान होती है, जिससे वह व्याज, टैक्स, शुल्क आदि से मुक्त होने पर ही न्यायशील बनी रह सकती है।*

प्रश्न-26 : क्या सरकार के अतिरिक्त सामान्य व्यक्तियों अथवा संस्थाओं द्वारा भी ऋण पर व्याजादि नहीं लगाया जाना चाहिए?

उत्तर-26 : *मुद्रा पर व्याज किसी के लिए भी अनैतिक है। इसे अनीति, कुनीति अथवा दुनीर्ति के रूप में ही परिभाषित किया जा सकता है। व्याजखोरी कभी सुनीति नहीं बन सकती। मौद्रिक व्याजप्रथा वास्तव में गरीबों के आर्थिक शोषण का षड्यन्त्र मात्र है। दूसरों के परिश्रम का मूल्य चुकाए विना उसके परिश्रम द्वारा उत्पन्न फल को अन्यायपूर्वक खींचने की व्यवस्था को ही*

मौद्रिक व्याजप्रथा के रूप में देखा जा सकता है। यह दुष्कर्म चाहे सरकार करे, अथवा कोई सामान्य व्यक्ति या संस्था, मौद्रिक व्याजप्रथा किसी के लिए भी आचार सम्बन्धी पाप और व्यवहार सम्बन्धी अपराध सिद्ध होती है। मौद्रिक व्याजप्रथा एक ऐसा पापपूर्ण आपराधिक दुष्कर्म है, जो समाज या राष्ट्र की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को नष्ट कर डालती है। यह व्याजप्रथा जितनी प्रबल होती है, समाज या राष्ट्र में उतनी अधिक दरिद्रता उत्पन्न होती है। मध्यकाल में जब यह व्याजप्रथा अपने चरमशिखर पर थी, तब सभी राष्ट्रों में 95% से भी अधिक नागरिक घोर दरिद्रता और बेरोजगारी से ग्रस्त थे। सम्पूर्ण समाज केवल दो भागों में विभक्त था– 5% शोषक एवं 95% शोषित। पूर्वकाल में भी समाज में केवल दस्यु और दास, शोषक और शोषित, मालिक और गुलाम, धूर्त और मूर्ख के ही सम्बन्ध थे। तब समस्त संसाधन जमींदारों, सामन्तों के अधीन होते थे, और सम्पूर्ण उत्पादन को व्याज मानकर वे अपना स्वत्वाधिकार प्रतिष्ठित किए रहते थे। अतः प्राचीनकाल में शत–प्रतिशत व्याजखोरी की प्रथा प्रचलित थी। व्याजखोरी की दर जैसे–जैसे गिरती गयी, वैसे–वैसे समाज में मध्यम वर्ग का उदय हुआ। यह मध्यमवर्ग जैसे–जैसे बढ़ता जाएगा, व्याजखोरी समाप्त होती जाएगी। धन का समुचित वितरण केवल तभी संभव है, जबकि सरकार द्वारा इस कुत्सित व्याजप्रथा को समाप्त किया जाए, तथा इसे घोर दण्डनीय अपराध घोषित किया जाए। सरकार की रेपो और प्रतिरेपो व्याजदरें ही समाज में व्याजखोर सेठों और सूदखोर साहूकारों को जन्म देती हैं। सरकार की व्याजखोरी को आदर्श मानकर समाज में बड़े–बड़े व्याजखोर व्यक्ति और संस्थाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। सब मिलकर समाज के भोले–भाले नागरिकों के परिश्रम को व्याज के माध्यम से निर्दयतापूर्वक खींचकर, कुछ कर्म किए विना आजीवन घोर समृद्धि का आनन्द प्राप्त करते हैं। इस व्याजखोरी द्वारा दूसरों के उपार्जित धन को खींचकर ये निर्दयी लोग बड़े–बड़े पूँजीपति बन जाते हैं और उसी पूँजी से उद्यम स्थापित करके सामान्य जनता को श्रमिक के रूप में दास बना लेते हैं, तथा जो अन्य कोई भी उद्यम स्थापित करना चाहे, तो उसे उद्यम हेतु आवश्यक विनियोग के रूप में व्याजयुक्त पूँजी देकर उन्हें भी दास बनाने में सफल हो जाते हैं।

प्रश्न-27 : निवेश, ऋण एवं उधार के बीच क्या अन्तर है? क्या उधार को सौहार्द प्रेरित व्यवहार कहा जाना चाहिए?

उत्तर-27 : *किसी उद्यम में लाभ–हानि की समुचित सहभागिता के उद्देश्य से किया जानेवाला विनियोग ही 'निवेश' है। केवल लाभ या प्रतिफल प्राप्ति के उद्देश्य एवं वापसी की शर्त पर दी जानेवाली धनसम्पदा ही 'ऋण' है। किसी लाभ या प्रतिफल के उद्देश्य के विना वापसी की शर्त पर दिया जानेवाला धन या सम्पत्ति ही 'उधार' है। इन परिभाषाओं से निवेश, ऋण एवं उधार को भली–भाँति समझा जा सकता है। स्पष्ट है कि इन तीनों आर्थिक या मौद्रिक व्यवहारों के बीच भेद भी है। निवेशकर्ता को उद्यम पर समुचित स्वामित्व प्राप्त होता है, किन्तु ऋणदाता को उद्यम पर लाभ में समुचित सहभागिता का अधिकार प्राप्त होता है, जबकि उधारदाता को किसी भी उद्यम में लाभ–हानि के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता। केवल सौहार्द से प्रेरित होकर ही उधार का लेन–देन होता है। इस विवरण से यह भी स्पष्ट है कि निवेश, ऋण एवं उधार में से कोई भी आर्थिक व्यवहार व्याज से सर्वथा मुक्त रहता है। व्याज की नीति तो इन तीनों में से किसी भी व्यवहार पर लागू नहीं हो सकती। निवेश, ऋण एवं उधार की उपरोक्त न्यायसंगत परिभाषाएँ ही सात्त्विक व्यवहार को जन्म देती हैं। आर्थिक व्यवहार जितना शुद्ध होता है, उतना ही आर्थिक विकास, प्रगति एवं समृद्धि का द्वार खुलता है।*

प्रश्न-28 : ऋण के लेन-देन की न्यायशील प्रक्रिया क्या है?

उत्तर-28 : *ऋण केवल तभी दिया जा सकता है, जबकि ऋणग्राही के पास तरलीकरण हेतु कोई स्थूल सम्पत्ति सुलभ न हो। ऐसी दशा में ऋण दिए जाने पर जिस वस्तु अथवा उद्यम के लिए ऋण दिया जा रहा है, उसे ही प्रतिभूति माना जा सकता है। कोई सरकार या संस्थान अथवा व्यक्ति द्वारा ऋण दिया जा सकता है। ऋण हेतु आवेदन प्रस्तुत होने पर ऋणदाता द्वारा यह देखना आवश्यक है कि ऋणग्राही के पास तरलीकरण हेतु कोई स्थूल सम्पत्ति सुलभ नहीं है। ऋण देने से पूर्व एक लिखित सहमतिपत्र पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर होने अनिवार्य हैं। इस सहमतिपत्र में ऋण की वसूली सम्बन्धी शर्तों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए, तथा ऋण पर ब्याज लिए जाने सम्बन्धी कोई शर्त नहीं लगायी जानी चाहिए। यह ऋण केवल उत्पादक कार्यों के लिए ही दिया जा सकता है, तथा उत्पादन कार्य के लिए स्थापित उद्यम में होनेवाले लाभ पर समानुपातिक हिताधिकार की शर्त का स्पष्ट उल्लेख भी सहमतिपत्र में होना आवश्यक है। उद्यम को हानि होने पर ऋणदाता का उत्तरदायित्व अस्वीकार करनेवाली शर्त का भी उल्लेख होना चाहिए, जिससे कि भविष्य में किसी भी प्रकार का विवाद उत्पन्न न हो। ऋणदाता का लाभ पर हिताधिकार कुल लाभ के तृतीयांश पूँजीगत भाग में से कुल विनियोजित पूँजी के समानुपातिक अंश तक सीमित होगा।*

प्रश्न-29 : ब्याज की दर के घटने-बढ़ने से संसार में वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य अथवा मँहगाई-सस्ताई का क्या सम्बन्ध है?

उत्तर-29 : *मौद्रिक व्याजदर के उच्चावचन या उतार-चढ़ाव से बाजार में वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं होता। वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य बाजार में उनकी माँग और पूर्ति के सिद्धान्त पर आधारित होता है। यही न्यायोचित भी है। किन्तु अर्थशास्त्रियों द्वारा यह झूठा प्रचार किया जाता है कि व्याजदर बढ़ने से मँहगाई घटती है अथवा व्याजदर घटने से मँहगाई बढ़ती है। मुद्रा पर व्याज तो कभी न्यायशील हो ही नहीं सकता। व्याज तो आपराधिक प्रवृत्ति के कारण थोपा जाता है। व्याजखोरी एक प्रकार का पाप और अपराध है। मौद्रिक व्याजप्रथा समाज की ऐसी कुरीति है, जो सम्पूर्ण सामाजिक एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को तहस-नहस कर डालती है, तथा शोषणकारियों के लिए एक स्वर्णिम अवसर उत्पन्न करती है कि वे सम्वैधानिक रूप से साधारण जनता का आर्थिक शोषण कर सकें। इस शोषणकर्म के अतिरिक्त व्याज अथवा व्याज की दर का कोई उपयोग नहीं है। मँहगाई घटाने की आड़ में देश के नागरिकों को मूर्ख बनाने का एक भयंकर षड़यन्त्र व्याजनीति के द्वारा किया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि किसी भी वस्तु या सेवा की पूर्ति न्यून होने पर उस वस्तु का मूल्य स्वतः बढ़ने लगता है और पूर्ति अधिक होने पर उस वस्तु का मूल्य घटने लगता है। इसके अतिरिक्त मूल्यनिर्धारण का कोई भी सिद्धान्त एक छलावा मात्र है। मूर्खों पर धूर्तों का वर्चस्व स्थापित करने में यह व्याजनीति बड़ी सहायक है। इसीलिए अनेक प्रकार के कुतर्क देते हुए इस व्याजप्रथा को जीवित रखने का सरकारी एवं गैरसरकारी प्रयत्न किया जाता है।*

प्रश्न-30 : मौद्रिक व्याजदर से मुद्रा की स्फीति या संकुचन का क्या सम्बन्ध है?

उत्तर-30 : *मौद्रिक व्याजदर का मुद्रा की स्फीति और संकुचन से कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं है। अब तक के अर्थशास्त्रियों द्वारा मुद्रा की स्फीति और संकुचन की परिभाषाएँ ही दोषपूर्ण ढंग से की गयी हैं। बाजार में उपलब्ध मुद्रा की कुल मात्रा के बढ़ने और घटने को मुद्रा की स्फीति*

और संकुचन के रूप में परिभाषित किया गया है। जबकि मुद्रा के संतुलित निगमन को प्रभावित करनेवाली मुद्रा की मात्रा को मुद्रा की स्फीति या संकुचन के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए। यहाँ पर मुद्रा के संतुलित निगमन को समझना आवश्यक है। मुद्रा किसी प्रतिभूति के बदले में ही जारी की जाती है। यदि इस प्रतिभूति का बाजारमूल्य न्यून हो और जारी किए जानेवाली मुद्रा अधिक मात्रा में हो, तो मुद्रास्फीति की दशा उत्पन्न होती है। इसके विपरीत यदि स्वीकृत प्रतिभूति का बाजारमूल्य अधिक हो और उसके बदले में जारी की जानेवाली मुद्रा की मात्रा न्यून हो, तो मुद्रासंकुचन की दशा उत्पन्न होती है। स्पष्ट है कि मुद्रानिगमन संतुलन बिगड़ने पर ही मुद्रा स्फीति अथवा संकुचन की दशा उत्पन्न हो सकती है, अन्यथा नहीं; और इस मौद्रिक असंतुलन द्वारा उत्पन्न मुद्रास्फीति का प्रभाव मुद्रानिगमन संस्थान पर ही पड़ता है। वह हानि उठा सकता है अथवा दिवालिया हो सकता है। जबकि मौद्रिक असंतुलन के कारण उत्पन्न मुद्रासंकुचन का प्रभाव सम्पूर्ण राष्ट्र पर पड़ता है, जिससे राष्ट्रीय आर्थिक विकास कुंठित होने लगता है। स्पष्ट है कि मौद्रिक व्याजदर के घटने–बढ़ने से मुद्रा की स्फीति या संकुचन का कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं है। किन्तु श्रमिकों के श्रम का शोषण करने के लिए यह कारगर अवश्य है।

प्रश्न-31 : तरलीकरण और निवेश में क्या भेद है? क्या ये दोनों भी निर्भार होने चाहिए?

उत्तर-31 : *तरलीकरण और निवेश में निश्चित रूप से भेद है। तरलीकरण केवल मौद्रिक संस्थान द्वारा किया जाता है। जबकि निवेश कोई भी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा किसी भी उद्यम में किया जा सकता है। तरलीकरण किसी स्थूल सम्पदा के लिए किया जाता है, जबकि निवेश किसी विशेष उद्यम के लिए किया जाता है। तरलीकरणकर्ता किसी उद्यम के लाभ–हानि से सम्बन्ध नहीं रखता और न ही उस उद्यम पर स्वामित्व धारण करता है। जबकि निवेशकर्ता तत्सम्बन्धी उद्यम के लाभ–हानि से सम्बन्ध रखता है और उस उद्यम पर आनुपातिक स्वामित्व भी धारण करता है। तरलीकरण के लिए किसी स्थूल सम्पत्ति को होना आवश्यक है, जबकि निवेश के लिए किसी सम्पत्ति को होना आवश्यक नहीं है। यद्यपि तरलीकरण और निवेश में भेद है, किन्तु इन दोनों की प्रक्रिया के द्वारा आर्थिक विकास प्रभावित होता है। किसी अर्थव्यवस्था में तरलीकरण एवं निवेश की प्रक्रिया धीमी अथवा न्यून हो, तो आर्थिक विकास का स्तर गिरने लगता है अथवा धीमा या कुंठित हो जाता है। जबकि तरलीकरण एवं निवेश की प्रक्रिया तीव्र एवं प्रबल हो, तो आर्थिक विकास का स्तर उठने लगता है अथवा तीव्र एवं समृद्ध होने लगता है। स्पष्ट है कि तरलीकरण एवं निवेश को जितना सरल, सहज, स्वतन्त्र एवं निर्भार बनाए रखा जाएगा, उतना अधिक आर्थिक विकास की संभावना होगी। अतः तरलीकरण एवं निवेश दोनों ही निर्भार होने चाहिए, तथा इन पर किसी भी प्रकार का व्याज, टैक्स एवं शुल्क आदि का भार नहीं लगाया जाना चाहिए।*

प्रश्न-32 : जिस राष्ट्र के राजनेता दुष्ट हों, वहाँ पर यह मौद्रिक नीति अपने सात्त्विक एवं न्यायशील रूप में कैसे लागू हो सकेगी?

उत्तर-32 : *विश्व के सभी राष्ट्रों में राजनेता समान रूप से दुष्ट नहीं हैं। आज संसार में लगभग 200 से भी अधिक राष्ट्र हैं। इन सभी राष्ट्रों की सरकारें अलग–अलग हैं, तथा इन सभी सरकारों की अपनी–अपनी प्रभुसत्ता है। प्रत्येक प्रभुसत्तासम्पन्न राष्ट्र की अपनी 'मुद्रा' है। किन्तु वर्तमान विश्व के किसी भी राष्ट्र में अभी तक आंकिक मुद्रा प्रणाली (**Digital***

*Currency System) एवं मौद्रिक व्यवहार में लेखांकन पद्धति (Accounting Method) लागू नहीं है, जबकि मौद्रिक लेखांकन पद्धति ही एकमात्र शुद्ध मुद्राप्रचालन पद्धति है, क्योंकि इस पद्धति के प्रयोग से किसी भी प्रकार का मौद्रिक अपराध नियन्त्रित हो जाता है। यह मौद्रिक लेखांकन पद्धति पूर्णतः पारदर्शी एवं प्रामाणिक है, जो सभी प्रकार के मौद्रिक अपराधों को नियन्त्रित करने में पूर्ण समर्थ है। मूर्खों और धूर्तों को छोड़कर यह बात संसार का प्रत्येक प्रबुद्ध प्राणी भलीभाँति समझ सकता है। धूर्तों की संख्या 1% से अधिक नहीं है। किन्तु शिक्षा की सुलभता न होने के कारण अधिकांश राष्ट्रों की अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित या अल्पशिक्षित बनी हुई है। यही उनकी मूर्खता का मूल कारण है। कुशिक्षित लोग धूर्त हो जाते हैं, अशिक्षित या अल्पशिक्षित लोग मूर्ख हो जाते हैं। शुद्ध शिक्षा–संस्कारिता के अभाव में ही समाज या राष्ट्र में मूर्खता एवं धूर्तता का वातावरण उत्पन्न होता है। इनमें से धूर्त लोग ही समाज के अन्य साधारण जनों या मूर्ख लोगों को दास बनाए रखने के लिए दूषित मौद्रिक नीति लागू किए रहते हैं, जिससे साधारण जनता को गरीब, दरिद्र, असहाय बनाए रखते हुए उनका शोषण कर सकें। धूर्तों की यह दैत्यवृत्ति उन्हें दूसरों का शोषण करने की प्रेरणा देती है। किन्तु अब विश्वमानवसमाज में शिक्षा का स्तर बढ़ रहा है, जिससे मनुष्यों के मनोबुद्धि का विकास होने लगा है। अब वे हित–अहित, उचित–अनुचित, सत्–असत् का निर्णय करने में समर्थ होने लगे हैं। अतः अपने हिताधिकारों और धूर्तों के षड़यन्त्रों को समझने की सामर्थ्य का विकास जनसाधारण के मस्तिष्क में प्रकाशित होने लगा है, तथा ऐसे लोगों की सख्या बढ़ रही है। लोकजीवन में अब ऐसे सकारात्मक बुद्धि के लोगों का बहुमत सिद्ध होने की स्थिति आ गई है, अतः धूर्तों की धूर्तता या दुष्टों की दुष्टता को राष्ट्र या समाज पर अपना अधिपत्य जमाए रखने के अवसर अब क्षीण होने लगे हैं। अब लोकमत सत्यात्मक एवं यथार्थ न्यायशील अर्थव्यवस्था एवं आर्थिक नीतियों के लिए स्वतः निर्मित होने लगा है। न्यायशील नीतियों की समझ और स्वीकारोक्ति समाज में बढ़ रही है। समाज से ही राष्ट्र का जन्म होता है। अतः समाज की यह प्रबुद्धता और भावप्रवणता सत्यात्मक न्यायशीलता के पक्ष में खड़ी होती जा रही है। यह बात **'न्याय धर्म सभा'** द्वारा न्याय के पक्ष में जनमतसंग्रह अभियान (2006) द्वारा प्रमाणित भी हुई है। अतः न्यायधर्म का सूर्योदय हमारे समाज एवं राष्ट्र में अतिशीघ्र ही होनेवाला है।*

प्रश्न-33 : क्या न्यायधर्मसभा लोकतन्त्र में विश्वास करती है? और लोकमत के द्वारा ही इन नीतियों को लागू करना चाहती है?

उत्तर-33 : *न्यायधर्मसभा पूर्णतः लोकतन्त्र में विश्वास करती है, बल्कि लोकतन्त्र को गुणात्मक बनाए जाने का भी प्रतिपादन करती है। गुणात्मक लोकतन्त्र में लोकमत सिद्ध करने से पूर्व पात्रतापरीक्षण की आवश्यकता होती है। परीक्षणों द्वारा सुपात्र सिद्ध होने पर ही लोकमत प्राप्ति हेतु चुनावी प्रक्रिया में सम्मिलित होने का समर्थन करती है। पात्रतानुसार पदनियुक्ति की व्यवस्था ही न्यायशील हो सकती है। पात्रता की उपेक्षा करके न्यायशीलता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता। अपात्र व्यक्ति पद के कार्यभार को सफलतापूर्वक वहन नहीं कर सकते। अतः विश्व के सभी राष्ट्रों को गुणात्मक लोकतन्त्र की आवश्यकता है।*

विश्व के अधिकांश राष्ट्रों में लोकतन्त्र है, जिसमें लोकमत के आधार पर ही सम्पूर्ण राष्ट्रीय व्यवस्था बनती और चलती है। 'लोक' शब्द का अभिप्राय 'सार्वजनिक' से है। 'सार्वजनिक' शब्द का अभिप्राय राष्ट्र के उन सभी नागरिकों से है, जो उसमें निवास करते हैं। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक के हितों की रक्षा ही इस लोकतन्त्र का उद्देश्य होता है। सर्वता के

विना सत्य सिद्ध नहीं होता। सर्वव्यापकता की सत्य की परिभाषा है। सत्यात्मक न्यायशीलता में सर्वहितकारिता का लक्षण अनिवार्य है। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक के हिताधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से परिकल्पित लोकतन्त्र लोकमत की अपेक्षा रखता है। भारत की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में भी लोकतन्त्र होने के कारण लोकमत के आधार पर आर्थिक नीतियों का प्रतिष्ठापन संभव है। अतः न्यायशील अर्थव्यवस्था को राष्ट्र में प्रतिष्ठित करने के लिए लोकमत संग्रह का अभियान न्यायधर्मसभा द्वारा जनवरी, 2006 से ही संचालित किया जा रहा है। न्यायशील मौद्रिक तरलीकरण प्रणाली सहित अन्य मौद्रिक नीतियाँ भी भारत की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की अनिवार्य आवश्यकताएँ हैं। अतः राष्ट्र की समस्त आर्थिक नीतियों को प्रतिष्ठित करने के लिए लोकमतसंग्रह का ही अवलम्बन लिया जा रहा है। इसके लिए न्यायधर्मसभा द्वारा खुली आनलाइन वोटरमेम्बरशिप वेबसाइट के माध्यम से प्रदान की जा रही है। राष्ट्र के जो नागरिक इन आर्थिक या मौद्रिक नीतियों से सहमत हैं, वे वोटरमेम्बरशिप प्राप्त करके न्यायधर्मसभा के पक्ष में अपना स्पष्ट मत व्यक्त करें। यह वोटरमेम्बरशिप का अभियान खुले मतदान की प्रक्रिया है। न्यायधर्मसभा द्वारा 'मतदाता सदस्यता अभियान' देश के न्यूनतम 51% मतसंग्रह के लक्ष्य को प्राप्त करने तक संचालित किया जाएगा। मतदान 50% से अधिक होने पर न्यायध र्मसभा द्वारा प्रकाशित इन आर्थिक नीतियों के पक्ष में लोकतान्त्रिक बहुमत सिद्ध हो जाएगा। इस बहुमत को चुनाव आयोग एवं सुप्रीमकोर्ट के समक्ष प्रस्तुत करके इन नीतियों को लागू करने का आग्रह सरकार से किया जाएगा। इन नीतियों के पक्ष में बहुमत सिद्ध होने पर यह प्रमाणित हो जाएगा कि राष्ट्रीय सरकार अल्पमत में है, और यदि वह इस लोकमत से सहमत नहीं होती, तो उसे पद पर बने रहने का कोई नैतिक अधिकार नहीं रह जाएगा। इसप्रकार से न्यायधर्मसभा इस खुली एवं प्रामाणिक मतदान प्रक्रिया के माध्यम से इन नीतियों को लागू करने का प्रयास कर रही है। लोकतान्त्रिक राष्ट्र में लोकमत ही सर्वोपरि होता है। लोकमत के विपरीत खड़ी हुई कोई भी संसद या सरकार स्वयं को नैतिक नहीं प्रमाणित कर सकती। अतः अनैतिक सरकार को हटाने के लिए जनता को स्वतः अधिकार प्राप्त हो जाएगा। गुप्त मतदान की प्रक्रिया में छल, कपट, षड़यन्त्र, धोखा, बूथकैप्चरिंग आदि जोखिम विद्यमान रहते हैं, जिससे वास्तविक लोकमत प्रमाणित नहीं हो पाता। अतः न्यायधर्मसभा खुले मतदान की प्रक्रिया द्वारा ही स्वच्छ लोकतन्त्र का समर्थन करती है, क्योंकि गुप्त मतदान सदैव संदिग्ध है। शंकाग्रस्त मतदान से अधिक अच्छा है– खुला मतदान।

प्रश्न-34 : 'न्याय धर्म सभा' हरिद्वार इस न्यायशील मौद्रिक प्रणाली को लागू करने के लिए क्या उपाय कर रही है? इस अभियान की पृष्ठभूमि क्या है?

उत्तर-34 : *हमारे द्वारा धर्मस्थापना अभियान 25 सितम्बर, 1990 को जबलपुर, मध यप्रदेश से प्रारम्भ किया गया था। लगभग एक दशक तक जनजागरण अभियान चालाया गया। इसके लिए देश के विभिन्न भागों में सार्वजनिक सभाएँ सम्बोधित करी गयीं। इसी दौरान धर्मसंस्थापन कार्य हेतु कार्यकर्ताओं के निर्माण का कार्य भी चलता रहा। दिनांक 25 जनवरी, 1999 को* ***'धर्म संस्थापक संघ'*** *का गठन किया गया। प्राचीन दार्शनिक एवं आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा प्रतिपादित सत्-सिद्धान्त पर आधारित शाश्वत एवं सनातन धर्म की संप्रतिष्ठा का यह अभियान क्रमशः विगत 22 वर्षों से निरन्तर गतिमान है। दिनांक 01 जनवरी, 2001 को इस सत्धर्म में जनसमाज का प्रवेश प्रारम्भ हुआ। सत्-सिद्धान्त द्वारा प्रणीत सत्य, प्रेम, न्याय, पुण्य की प्रतिष्ठा का यह सात्त्विक एवं*

पावन अभियान दिनांक 28 सितम्बर, 2006 को वैधानिक ढंग से ट्रस्ट के रूप में ***'धर्म संस्थापक संघ'*** *को रजिस्टर्ड कराया गया।* ***'न्याय धर्म सभा'*** *इसी 'धर्म संस्थापक संघ' की एक इकाई है। 'न्याय धर्म सभा' की स्थापना का मूल उद्देश्य समाज एवं राष्ट्र में न्याय के सत्यात्मक एवं यथार्थ स्वरूप की प्रतिष्ठा करना है। 'न्याय' ही समाज एवं राष्ट्र का वास्तविक 'धर्म' है। न्याय के विना कोई भी समाज या राष्ट्र सुव्यवस्थित, समृद्ध, सुखी एवं स्वस्थ नहीं रह सकता। इसी न्याय की स्थापना हेतु संचालित अभियान के अन्तर्गत दिनांक 01 जनवरी, 2006 को* ***'न्याय धर्म सभा'*** *हरिद्वार की ओर से राष्ट्रीय नागरिकों के लिए शिक्षा, जीविका, सुविधा एवं संरक्षण प्राप्ति के 4 जनाधि ाकारों की घोषणा करी गई। इन चारों मूलभूत जनाधिकारों को प्रतिष्ठित करने एवं उसे सम्वैधानिक दर्जा प्रदान करवाने के लिए 08 जनवरी, 2006 को 'जनमतसंग्रह अभियान' प्रारम्भ किया गया। 'न्याय धर्म सभा' द्वारा जनमतसंग्रह के लिए कई टीमों का गठन करके हरिद्वार सहित देश के कई भागों में जनमतसंग्रह का कार्य संपन्न हुआ। यह एक प्रकार का लोकमत सर्वेक्षण भी था। इससे यह स्पष्ट जानकारी प्रामाणिक रूप से उभरकर सामने आयी कि देश के लगभग 99% से भी अधिक लोग इन चारों न्यायशील जनाधिकारों से सहमत हैं। इस राष्ट्रीय न्यायशीलता के प्रतिपादन से असहमत होनेवालों की संख्या नगण्य है। साधारण शब्दों में कहा जाए, तो सम्पूर्ण विश्व की मानवता इस न्यायशीलता से सहमत है, और सम्पूर्ण विश्व को एक न्यायशील सार्वभौमिक राष्ट्र (Universal Nation) के रूप में प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इस बीच 01 जनवरी, 2006 को 'न्याय धर्म सभा' की ओर से एक विशाल न्यायसम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें समाज के साधारण नागरिकों के साथ-साथ अनेक बुद्धिजीवियों, पत्रकारों एवं सन्तों की उपस्थिति सराहनीय रही। इसी 'न्याय सम्मेलन' में चारों जनाधिकारों की घोषणा करने के पश्चात् इनको परिभाषित करते हुए एवं इनके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित किया गया, जिसे पुस्तिका के रूप में संघ की ओर से प्रकाशित भी किया गया है। पुनः 01 जनवरी, 2007 को द्वितीय न्यायसम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें कई गणमान्य नागरिक एवं सन्त-महात्मा उपस्थित हुए। संघ से जुड़े हुए अनेक सज्जनोचित लोग देश के कई भागों से सम्मेलन में पधारे। जनवरी 1999 से दिसम्बर 2010 तक लगातार सद्ग्रन्थों के प्रतिपादन में अधिकांश समय नियोजित हुआ। पुनः 01 जनवरी, 2011 को तृतीय 'न्यायसम्मेलन' आयोजित किया गया, जिसमें देश के कई भागों से जुड़े हुए लोगों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। इस तृतीय न्यायसम्मेलन में न्यायस्थापना अभियान को सार्वजनिक रूप से संचालित करने की घोषणा करी गई। दिनांक 20 मार्च, 2011 को एक विशेष सभा आमंत्रित की गयी, जिसमें विश्व के 200 से भी अधिक राष्ट्रों को मिलाकर एक न्यायशील सार्वभौमिक राष्ट्र की स्थापना हेतु उसकी नागरिक सदस्यता का अभियान प्रारम्भ किया गया, तथा उस सार्वभौमिक राष्ट्र की एक वेबसाइट भी निगमित की गयी। इस सार्वभौमिक राष्ट्र की सम्वैधानिक संरचना पर एक पुस्तिका भी प्रकाशित करी गयी। शिक्षा, जीविका, सुविधा, संरक्षण आदि चारों जनसेवाओं को सामाजिक रूप से सुलभ कराने के लिए विद्यायोजना, उद्यमयोजना, ग्रामयोजना एवं स्वस्तियोजना को क्रियान्वित करने का निश्चय किया गया। इन चारों सेवाओं को संचालित करने के लिए कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 25 के अन्तर्गत* ***'सत्धर्म सेवा संस्थान'*** *के नाम से*

*एक ऐसी कम्पनी की स्थापना की गई, जो **'धर्म संस्थापक संघ'** के 9वें उद्देश्य की पूर्ति कर सके, जिसमें चारों मानवीय पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्रतिष्ठा का उल्लेख है। इन चारों पुरुषार्थों द्वारा ही गुण, धन, सुख, स्वास्थ्य प्राप्ति के मानवाधिकारों का प्रतिपादन होता है, तथा इन्हीं चारों मानवाधिकारों की सुलभता को सुनिश्चित करने के लिए शिक्षा, जीविका, सुविधा, संरक्षण आदि के रूप में चार जनाधिकारों का प्रतिपादन होता है। इन चारों मानवाधिकारों एवं चारों जनाधिकारों की संप्रतिष्ठा के लिए सत्धर्म सेवा संस्थान द्वारा सन् 2011 में एक निःशुल्क विद्यालय का शुभारम्भ किया गया, जिसका नाम **'सत्धर्म विद्यालय'** रखा गया। इस विद्यालय में 300 से भी अधिक विद्यार्थियों ने प्रवेश प्राप्त किया। इस विद्यालय में सम्पूर्ण शिक्षा-प्रशिक्षण की व्यवस्था संस्थान की ओर से अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरूप करी जा रही है। जीविका सुलभ कराने तथा अन्य मौद्रिक समस्याओं को दूर करने तथा समाज में व्याप्त भयंकर शोषणकारी मौद्रिक व्याजप्रथा को समाप्त करने के लिए 10-10-2011 को **'सत्धर्म फायनेंशियल सर्विस'** के नाम से एक मौद्रिक संस्था का शुभारम्भ किया गया, जो निर्व्याज ऋणसेवा प्रदान करने के लिए तभी से निरन्तर कार्यरत है। यह निर्व्याज ऋणसेवा मानवसमाज के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। इसप्रकार से शिक्षा एवं जीविका सुलभ कराने के दोनों प्रयासों का शुभारम्भ सत्धर्म सेवा संस्थान की ओर से हो चुका है, और वर्तमान में लगातार चल रहा है, आगे बढ़ रहा है। शीघ्र ही कृषिसेवा आदि के माध्यम से रोजगार के नये अवसरों को जन्म देने हेतु सहकारी प्रणाली अपनाये जाने का प्रावधान है। वर्ष 2009-10 में हमारे द्वारा न्यायशील अर्थशास्त्र का प्रतिपादन किया गया, जिसमें अर्थशास्त्र के न्यायशील सिद्धान्तों को प्रकाशित किया गया। इसमें राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के न्यायशील स्वरूप का प्रतिपादन समाहित किया गया, तथा अर्थव्यवस्था की पाँचों आर्थिक क्रियाओं के न्यायशील स्वरूप का परिचय दिया गया। न्यायधर्मसभा, हरिद्वार की ओर से दिनांक 15 अगस्त, 2012 को उसी न्यायशील अर्थशास्त्र में वर्णित मौद्रिक नीति के अन्तर्गत **'आंकिक मुद्रा प्रणाली'** (Digital Currency System) को राष्ट्रीय व्यवस्था में लागू करने के लिए भारत के वर्तमान प्रधानमन्त्री श्री मनमोहनसिंह एवं अन्य 12 महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों जिसमें वित्तमन्त्री, राष्ट्रपति, रिजर्वबैंक गवर्नर, योजनाआयोग के उपाध्यक्ष एवं सुविख्यात समाजसेवी श्री अन्नाहजारे, श्री केजरीवाल, सुश्री किरनबेदी, बाबा रामदेव एवं आरएसएस कार्यकर्ता श्री अनिलवर्मा आदि को रजिस्टर्ड पत्र भेजकर यह निवेदन प्रस्तुत किया गया कि **भ्रष्टाचार, कालाधन, नकलीमुद्रा, टैक्सचोरी एवं अन्य मौद्रिक अपराधों** को 100% समाप्त करने के लिए इस सुनिश्चित उपाय को यथाशीघ्र राष्ट्रीय मौद्रिक नीति में समाहित करें, जिससे कि राष्ट्र में व्याप्त भयंकर मौद्रिक अपराधों को समाप्त किया जा सके, क्योंकि प्रायः भारत सहित सम्पूर्ण विश्व इन पाँचों प्रकार के भयंकर मौद्रिक अपराधों से ग्रस्त एवं त्रस्त है। इससे राष्ट्र का आर्थिक विकास कुंठित हो रहा है। इसके पश्चात् मौद्रिक नीति के द्वितीय अंग को भी राष्ट्रीय मौद्रिक नीति में समाहित करने के लिए न्यायधर्मसभा की ओर से अक्टूबर, 2012 में मौद्रिक नीति पर एक पुस्तक का प्रकाशन किया गया, जो धर्मसंस्थापकसंघ के उसी **'न्यायशील अर्थशास्त्र'** नामक ग्रन्थ पर आधारित है। इस पुस्तिका का नाम है-**'संतुलित मौद्रिक तरलीकरण प्रणाली'** (Balanced Monetary Liquidization System)। यह पुस्तिका मौद्रिक नीति के उस न्यायशील सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है, जिसके*

अनुसार किसी भी मूल्यवान स्थूल सम्पदा जिसका कोई बाजारमूल्य सिद्ध हो सके, उसके बाजारमूल्य के समकक्ष राशि तक तरलीकृत किया जा सकता है। इस सिद्धान्त की विस्तृत व्याख्या इस पुस्तिका में सुलभ है, जिसके आधार पर राष्ट्रीय मौद्रिक नीति को शुद्ध करके राष्ट्र के आर्थिक विकास की समस्त संभावनाओं को अल्पकाल में हस्तगत किया जा सकता है। इस संतुलित मौद्रिक तरलीकरण प्रणाली को अपनानेवाली राष्ट्रीय मौद्रिक नीति एक जादू की छड़ी की भाँति सम्पूर्ण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए ईश्वर का वरदान सिद्ध हो सकती है, जो किसी भी राष्ट्र को विदेशी ऋणसंकट, विदेशी निवेशसंकट, देशी ऋणसंकट, देशी निवेशसंकट एवं अन्य मौद्रिक संकटों से छुटकारा दिलाने में पूर्णतः समर्थ है। यह किसी भी राष्ट्र को मौद्रिक रूप से स्वावलम्बी बनाती है, तथा उसकी आर्थिक स्वतन्त्रता को सुनिश्चित करती है। इसके पश्चात् निर्भार मुद्राप्रचालन हेतु न्यायध र्मसभा की ओर से राष्ट्रीय मौद्रिक नीति में न्यायशीलता की प्रतिष्ठा हेतु एक अद्‌भुत पुस्तिका प्रकाशित की जा रही है, जो सम्पूर्ण राष्ट्रीय मौद्रिक नीति को शुद्ध करके न्यायशील बनाने में पूर्णतः समर्थ है। इस निर्भार मुद्राप्रचालन प्रणाली के अवलम्बन से समस्त प्रकार के मौद्रिक शोषणों का समापन हो जाता है। मौद्रिक शोषण से मुक्ति के लिए यह अचूक उपाय है। इस मौद्रिक नीति को अपनाकर कोई भी राष्ट्र सभ्य होने का गौरव प्राप्त कर सकता है। राष्ट्र से जंगलराज को समाप्त करके मंगलराज में प्रवेश हेतु उपरोक्त तीनों मौद्रिक नीतियाँ अत्यन्त प्रभावकारी हैं। राष्ट्रीय मौद्रिक नीति की शुद्धिकरण हेतु उनकी न्यायशीलता आवश्यक है। मौद्रिक नीतियों का यह न्यायशील प्रतिपादन 'न्यायधर्मसभा' की ओर से विश्व के समस्त राष्ट्रों के लिए ईश्वरीय वरदान की भाँति है। इन न्यायशील मौद्रिक नीतियों के प्रतिपादन के पश्चात् इनके प्रतिष्ठापन सम्बन्धी प्रयासों का संचालन भी न्यायधर्मसभा की ओर से किया जा रहा है।

इन न्यायशील मौद्रिक नीतियों के प्रतिपादन एवं प्रतिष्ठापन के प्रयासों के अतिरिक्त न्यायधर्मसभा द्वारा राष्ट्रीय न्यायशीलता के रक्षणार्थ राजकोषीय नीति एवं सम्पदानीति के न्यायशील स्वरूप के प्रतिपादन एवं प्रतिष्ठापन सम्बन्धी कार्यों का सम्पादन भी किया जा रहा है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को न्यायशील बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों का न्यायशील होना आवश्यक है।

वास्तविक राष्ट्रीय स्वतन्त्रता
(The Real National Freedom)

न्याय ही स्वतन्त्रता की नींव है। न्याय के विना कोई राष्ट्र स्वतन्त्र सिद्ध नहीं हो सकता। चाहे हिन्दुओं का राज्य हो, चाहे मुगलों का राज्य हो, चाहे अँग्रेजों का राज्य हो, चाहे काँग्रेसियों का राज्य हो, चाहे भाजपाइयों का राज्य हो, चाहे बसपाइयों, सपाइयों अथवा कम्युनिस्टों का राज्य हो, अथवा चाहे किसी अन्य पार्टी या पब्लिक का राज्य हो। यदि वह न्याय के समुचित हिताधिकारिता के सिद्धान्त को स्वीकार करके उसे व्यवहार में नहीं उतारता, और उसी न्याय की नींव पर राष्ट्रीय नियम, नीति, निर्णय का अस्तित्व नहीं बनाए रखता, तो वह सदैव राष्ट्रीय स्वतन्त्रता को नष्ट करके जनता को दासता की हथकड़ियों, बेड़ियों में जकड़ देता है। दल, बल, छल से पदस्थ होनेवाली सत्ता कभी न्यायशील नहीं हो सकती और जो पदस्थ होकर न्यायशीलता के लक्षणों को प्रतिफलित नहीं करती, वह राजसत्ता निश्चय ही दल, बल या छल से सत्तारूढ़ हुई है, ऐसा सुनिश्चित जानना चाहिए। न्यायशील अर्थव्यवस्था ही न्यायशील राष्ट्र का लक्षण है। न्यायशीलता ही स्वतन्त्रता है। एक न्यायशील स्वतन्त्र राष्ट्र में राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के चार लक्षण होते हैं– 1) भूमि की स्वतन्त्रता, 2) मुद्रा की स्वतन्त्रता, 3) राजकोष की स्वतन्त्रता, 4) संविधान की स्वतन्त्रता।

जिस राष्ट्र में भूमि पर लगान, टैक्स आदि प्रत्यारोपित है, वह राष्ट्र परतन्त्र है। जिस राष्ट्र में मुद्रा पर व्याज, शुल्क आदि प्रत्यारोपित है, वह राष्ट्र परतन्त्र है। जिस राष्ट्र में राजकोष पर स्वार्थ, लूट आदि प्रत्यारोपित है, वह राष्ट्र परतन्त्र है। जिस राष्ट्र में संविधान पर वैषम्य, पक्षपात आदि प्रत्यारोपित है, वह राष्ट्र परतन्त्र है। स्वतन्त्रता के चारों लक्षण यदि उपरोक्त प्रकार से विपरीत हैं, तो राष्ट्र में न्यायशीलता का अभाव सिद्ध होता है। वास्तव में न्याय ही स्वतन्त्रता है, अन्याय ही परतन्त्रता है। न्याय ही राष्ट्र का मौलिक धर्म है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी, बहाई आदि को कभी राष्ट्रीय धर्म की मान्यता प्राप्त नहीं हो सकती। केवल न्याय ही राष्ट्र का शाश्वत एवं सनातन धर्म है– ***'न्यायमूलं सुराज्यं स्यात्।'*** *प्राचीन भारतीय नीतिवचन प्रसिद्ध है–* ***'आरम्भो न्याययुक्तो यः स धर्म इति स्मृतः। अन्यायस्तु अधर्मेति एतत् शिष्टानुशासनम्॥'*** *अर्थात् 'समाज या राष्ट्र में जो कुछ भी न्यायपूर्वक किया जाता है, केवल वही धर्म है। अन्याय को अधर्म कहते हैं, ऐसा शिष्टजनों का उपदेश है।' शिष्ट और भ्रष्ट दो प्रकार के लोग होते हैं। शिष्टजनों को सज्जन कहा जाता है, भ्रष्टजनों को दुर्जन कहा जाता है। सज्जनों को समाज एवं राष्ट्र में सदा न्याय ही प्रिय होता है, किन्तु दुर्जनों को अन्याय ही प्रिय होता है। न्यायप्रिय जनों को चाहिए कि वे एक ऐसे न्यायशील सार्वभौमिक राष्ट्र* ***(Just Universal Nation)*** *की प्रतिष्ठा करें, जिसमें स्वतन्त्रता के उपरोक्त चारों लक्षण विद्यमान हों, तभी समृद्धि, सद्गुण, सम्बन्ध एवं समुन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा, तथा चारों ओर सुख–शान्ति का वातावरण तभी प्रतिष्ठित होगा।*

❀❀❀

'[illegible]'

आत्मनो न्यायवृत्तो यः स धर्मः इति स्मृतः।
अन्यायवृत्तमधर्मं इति तत्त्वविदो जनाः॥

जो कार्य न्यायपूर्ण होता है, वही धर्म कहलाता है। अन्याय ही अधर्म है। यही विद्वानों का उपदेश है। -(महाभारत)

प्रकाशक

धर्मसंस्थापकसंघ, ज्वालापुर, कनखल, हरिद्वार, उत्तराखण्ड

प्रकाशन तिथि

15 जनवरी, 2010

कम्प्यूटरग्राफी

सर्वेश

मुद्रक

धर्मसंस्थापकसंघ, ज्वालापुर, कनखल, हरिद्वार, उत्तराखण्ड

निवेदन - कृपया न्यायस्थापना अभियान सम्बन्धी अधिक जानकारी एवं अभियान में सम्मिलित होने के लिए धर्मसंस्थापकसंघ के मुख्यालय से सम्पर्क करें, मिलें, हमारी वेबसाइट देखें, ईमेल करें, पत्र लिखें अथवा फोन करें।

फोन नं. : 01334-244760, मो. : 09319360554

वेबसाइट- www.dharmsansthapaksangh.org

ईमेल- info@dharmsansthapaksangh.org